अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

भूदानयज्ञमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक

सौर चैत्र २२, शके १८७९ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार
वार्षिक मूल्य ६) एक प्रति २ आना : १३ नये पैसे

वर्ष-३, अंक-२८ 卐 राजघाट, काशी 卐 शुक्रवार, १२ अप्रैल, '५७

चार बातों का ध्यान रखें

मन में जाति-भेद और पक्ष-भेद जरा भी नहीं होना चाहिए। आप अगर जाति-भेद याद रखने वाले हैं, तो आप भूदान का काम नहीं कर सकेंगे। ऐसे लोगों से मुझे जरा भी मदद नहीं मिलती, जो अपने मन में याद रखता है कि 'मैं फलानी जाति का हूँ।' "मैं मानव हूँ और मानव के नाते मानव की सेवा करना मेरा धर्म है", ऐसी करुणा की भावना जिसके मन में हो, वही भूदान का कार्यकर्ता हो सकता है। दूसरी बात, आपको परस्पर प्रेम और सहयोग करना चाहिए, तभी काम में तेज आयेगा। तीसरी बात, विचारों का अध्ययन करना चाहिए और चौथी बात, कार्य में सातत्य होना चाहिए।

(अरुप्पुकोट्टै, २९-४) —विनोबा

भूदान : आत्मा की व्यापकता का पहला पाठ

(विनोबा)

आज के दिन का महत्त्व मेरे जीवन में एक दूसरा ही है। आज का ही दिन था—२५ मार्च! आज से ४२ साल पहले की बात है, जब कि हम घर छोड़ कर निकल पड़े। घर में कुछ दुःख था, इसलिए नहीं निकल पड़े, बल्कि इसलिए कि हमारे घर में काफी सुख था। चाह थी, आत्मा के दर्शन की। उसकी खोज में घर छोड़ कर हम निकल पड़े थे। वह खोज आज तक सतत जारी है। उन दिनों उस एक चिंतन के सिवा हमारी और किसी प्रकार के विषय-भोगों की तरफ यत्किंचित् नजर नहीं जाती थी। चित्त में वैराग्य था, फिर भी विषयों का जो प्रहार होना था, सो तो हुआ ही; परंतु वे हमें पराजित नहीं कर सके। आज हालत क्या है? आज अपने चित्त में हम अपार शांति का अनुभव कर रहे हैं। अभी हमने भजन सुना—"उदय पुइता आनन्दमय" (अपार आनन्द) उसीका हम अनुभव कर रहे हैं। वह हमारी खोज तो आज भी जारी ही है।

हमने मजबूती के साथ रास्ते को पकड़ लिया है। बाबा यह कह सकता है कि "चिक्कन वाघड़ी…" (मजबूत पकड़ लिया), यह वर्णन बाबा को लागू हो सकता है। उस दिन से आज तक बाबा के मन में यही रहा कि हम उस मार्ग के पथिक हैं और उसीकी खोज में लगे रहेंगे। आज हमारे चित्त में समाधान है। उन दिनों समाधान नहीं था, परंतु उस वक्त कार्य में जो आवेश था, वैसा ही आवेश आज भी हममें है। उस आवेश के कारण ही इन ४१ सालों में कोई थकान हमें नहीं आयी। आश्रम में अनेक प्रयोगों में समय गया। उन दिनों हम एक जगह स्थिर रहे थे। परंतु हमने चित्त में किसी एक स्थान को पकड़ नहीं रखा था। आज तो बाहर से भी किसी स्थान को पकड़े हुए नहीं हैं, क्योंकि हम रोज स्थान बदलते हैं। फिर भी हमें रोज यही अनुभूति होती है कि हम अपने ही स्थान में रहते हैं।

देहासक्ति : एक भयंकर भूल

यह जो भूदान, ग्रामदान चला है, वह हमारी दृष्टि से आत्म-दर्शन की खोज है। हमारी सबसे बड़ी गलतफहमी यह है कि हम अपने को एक देह में सीमित समझते हैं। संसार में आसक्त प्राणी इस देह के सुख को अपना सुख समझते हैं और वैसा सुख प्राप्त न हो, तो अपने को दुःखी समझते हैं। उनका सुख-दुःख अपने व्यक्तित्व के आस-पास खड़ा रहता है। पारमार्थिक साधना करने वाले साधकों की भी यही दशा है। वे अपने चित्तशुद्धि की ही इच्छा रखते हैं, वे अपनी उन्नति की ही प्यास रखते हैं। अगर अपनी उन्नति दीख पड़ती है, तो वे सुखी होते हैं। अपनी उन्नति नहीं दीख पड़ती है, अपने चित्त के राग-द्वेष गिरे हुए नहीं दीख पड़ते हैं, तो वे दुःखी होते हैं। उनकी परमार्थ-साधना अपने ही इर्द-गिर्द खड़ी रहती है। संसारासक्त मनुष्य अपनी ही चीज चाहते हैं और परमार्थ में लगे हुए भी अपनी ही चीज चाहते हैं। एक अपनी देह का सुख चाहता है, दूसरा अपने देहगत चित्त की शांति चाहता है। हम इन दोनों को गलत समझते हैं। इसमें समझने की गलती यह है कि दोनों अपने को इस देह में सीमित समझ रहे हैं।

मान लीजिये कि मेरे शरीर को सुख है और मेरे पड़ोसी को वह सुख हासिल नहीं है, तो स्वार्थासक्त मनुष्य को उसकी चिंता नहीं है। वह अपने देह-सुख से सुखी है। साधक की क्या दशा है? मान लीजिये कि उसके चित्त में विकार शांत है और पड़ोसी के चित्त में वह शांत नहीं है, तो साधक को उसकी चिंता नहीं है, वह अपने चित्त की शांति से संतुष्ट है। हम समझते हैं कि यह गलत है। जब तक हम अपने को एक देह में सीमित समझने की गलती से मुक्त नहीं होंगे, तब तक हमें आत्मा का दर्शन दूर है। आत्मा किसी एक देह में नहीं है। आत्मा अनेक देहों में है, उनमें से यह हमारा देह एक है।

आत्मा की व्यापकता

मान लीजिये कि मैं एक बड़े बंगले का मालिक हूँ। उसमें पचास कोठरियाँ हैं, जिनमें से एक कोठरी में मैं रहता हूँ, बाकी की कोठरियों में दूसरे लोग रहते हैं। मैं अपनी कोठरी नियमित रूप से साफ रखता हूँ, पर मान लीजिये कि दूसरे लोग अपनी-अपनी कोठरी की सफाई नहीं करते हैं, तो मैं यह नहीं मानता कि मैंने अपनी कोठरी साफ कर ली। सोचने की बात है कि वे लोग यदि अपनी कोठरी साफ नहीं करते हैं, तो उससे मेरा क्या संबंध? यही कि मैं जानता हूँ कि कुल बंगले का मालिक मैं हूँ, इसलिए उन सब कोठरियों में सफाई नहीं होती है, तो मुझे दुःख होता है। मैं रहता तो हूँ एक कोठरी में, परंतु सब कोठरियों के साथ मालिक के नाते मेरा संबंध है। इसी तरह मैं रहता तो हूँ इसी एक देह में, परंतु बाकी सब देहों के साथ मेरा मालिक के नाते संबंध है।

मैं सिर्फ इस देह का मालिक नहीं हूँ। इन सब देहों के साथ मेरा मालिक का संबंध है। मेरा पेट दुखता है, तो भी मेरा ही पेट दुखता है। आपका पेट दुखता है, तो भी मेरा ही पेट दुखता है। अगर मेरे चित्त में अशांति है, तो वह मेरी अशांति है और आपके दिल में अशांति है, तो वह भी मेरी अशांति है। यह व्यापक संबंध जब ध्यान में आयेगा, तभी आत्मा का दर्शन होगा। हरएक के सुख-दुःख का मेरे साथ संबंध है और हरएक की मानसिक शांति-अशांति मेरी ही शांति-अशांति है। मैं दूसरे को अपने से भिन्न समझूँगा, तो मैं गलत समझूँगा। यहाँ जो कुछ है, वह सब एक ही वस्तु है। चाहे उसका नाम "मैं" हो, "तुम" हो या "वह" हो। अवन, इवन, अवने, वह और यह एक ही है। सबके बाहर जो दीख पड़ता है, वही अंदर है।

मान लीजिये आपमें से कोई मेरे प्रति वैर कर रहा है, तो उसका अर्थ यह है कि मेरे मन में ही वैर पड़ा है, उसके बिना आप वैर कर नहीं सकते। इसलिए मेरा शत्रु आपमें नहीं है, मेरा शत्रु मुझमें ही पड़ा है। मान लीजिये कि आप मेरे प्रति बहुत प्यार कर रहे हैं, तो वह प्यार मेरे मन में ही पड़ा हुआ है। मुझे छोड़ कर आप मुझ पर प्यार नहीं कर रहे, मैं ही अपने पर प्यार कर रहा हूँ। मनुष्य को जब इतना दर्शन होगा, तब वह आत्मदर्शन के नजदीक चला जायेगा।

ग्रामदान : आत्मदर्शन का पहला सबक

ग्रामदान में गाँव की सब संपत्ति और जमीन गाँव की बनती है। ग्रामदान में व्यक्तिगत मालकियत छोड़ने की बात है। हम आज तक अपना श्रम परिवार को देते थे, आज से हम सारे गाँव को देंगे। हमारी श्रम-शक्ति सिर्फ अपने लिए नहीं है, सारे गाँव के लिए है। मेरा जो कुछ है, वह सिर्फ मेरे लिए नहीं है, सारे गाँव के लिए है। यह आत्मदर्शन का एक बिलकुल छोटा और पहला सबक है, इसलिए हमने कहा कि हमारी दृष्टि से ग्रामदान-आंदोलन आत्मा की खोज ही है।

www.vinoba.in

अखण्ड आत्मा के टुकड़े

उस व्यापक आत्मा के आज हमने कितने टुकड़े कर रखे हैं! गाँव में पचासों प्रकार की जातियाँ हैं। यह उसको छुयेगा नहीं, वह इसके हाथ का खायेगा नहीं। वह ऊँच जाति, तो यह नीच जाति! जाति-भेद, मालिक-मजदूर भेद, हरिजन-परिजन भेद, ख्रिस्ती-मुसलमान-हिंदू भेद, इस तरह के पचासों प्रकार के टुकड़े हम अपनी आत्मा के कर रहे हैं। जो अखंड, व्यापक आत्मा है, उसे हम फाड़-फाड़ कर टुकड़े बना रहे हैं। जैसे किसी मूर्ख बच्चे के हाथ में कैंची आ जाय, तो कपड़ा फाड़-फाड़ कर टुकड़े कर देता है, वैसा ही हम कर रहे हैं। उसे संविधान का बल मिलता है। संविधान में व्यक्तिगत मालकियत को मान्यता है। यहाँ तक है कि कुछ धर्मवाले तो कहते हैं कि "पर्सनल प्रॉपर्टी इज़ सेक्रेड"—(व्यक्तिगत संपत्ति पवित्र है) उस पर आक्रमण नहीं होना चाहिए। यह तो हम भी मानते हैं कि आक्रमण नहीं होना चाहिए, परंतु द्वेष का आक्रमण नहीं होना चाहिए, प्रेम का आक्रमण होना चाहिए।

बेटा अपने बाप से कहेगा कि इस घर पर मेरा भी हक है, तो क्या बाप नहीं मानेगा? बाप कहेगा कि 'मुझे बड़ी खुशी है कि तू आज समझ रहा है कि यह तेरा भी घर है। यह तेरा घर है, तो कल से तू भी झाड़ू हाथ में लेकर लगाना शुरू कर। मैं भी झाड़ू लगाऊँगा। हम दोनों मिल कर घर साफ करेंगे। इस तरह का प्रेम का आक्रमण हो सकता है। कोई हिंसा या बलात्कार से व्यक्तिगत सम्पत्ति लेना चाहता है, तो वह गलत है, क्योंकि व्यक्तिगत मालकियत का विचार ही गलत है, अगर हम जबरदस्ती से किसीकी चीज छीन लेते हैं, तो वह समझेगा कि यह अच्छी चीज है, इसलिए वह छीन रहा है। परंतु हम अगर उसको सद्विचार समझा दें, तो वह मालकियत को बोझ समझेगा और उसे नीचे पटक देगा, हल्का हो जायेगा। आज तक तो मालकियत को गहना समझ कर पहन लिया था। पुरुष स्त्रियों को कैदी बनाने के लिए हाथ, पाँव, कानों में दस-दस तोले के सोने के गहने डालते हैं। वे सोने के होते हैं, इसलिए स्त्रियों ने शृङ्गार-भूषण समझ कर उन्हें पहन लिया। परंतु वास्तव में वे बेड़ियाँ हैं! उनके कारण वे कहीं अकेली घूम नहीं सकतीं। रात को कहीं बाहर जा नहीं सकतीं। नाक में छेद नहीं है, तो छेद बना कर भी बोझा डालेंगी। वह भूषण मालूम होता है, परंतु वह दूषण है। गलत विचार के कारण दूषण भी भूषण मालूम हो रहा है।

मालकियत का विचार गलत

मालकियत का विचार पवित्र माना गया है। उस पर दूसरे किसीका आक्रमण नहीं होना चाहिए, ऐसा जो कहता है, वह स्वयं मालकियत को मानता है। एक लाख रुपये की संपत्ति का मालिक है। रात में चोर उसके घर में प्रवेश करके वे रुपये छीन ले गया, तो क्या उसकी मालकियत मिट गयी? तो क्या उसने क्रांति की? वह स्वयं मालकियत को मानने वाला है। उसकी मालकियत कैसे मिटेगी? क्योंकि उसकी मानसिक मालकियत तो चालू ही है। इस तरह हम जबरदस्ती से आक्रमण करते हैं, तो गलत विचार टूटता नहीं। असद्-विचार सद्-विचार से ही कटेगा। हम मालकियत पर हिंसा से आक्रमण करना नहीं चाहते हैं हम सिर्फ यह समझाना चाहते हैं कि वह असद्-विचार है।

लोगों को डर लगता है कि व्यक्तिगत मालकियत मिटा कर गाँव की मालकियत होगी, तो कुटुम्ब हट जायेंगे। कुटुम्ब-संस्था प्राचीन काल से आज तक चली आयी है। कुटुम्ब के कारण लोगों को संयम, प्रेम और त्याग का शिक्षण मिलता है, आनंद प्राप्त होता है। व्यक्तिगत संपत्ति के साथ कुटुंब-धर्म की जो कल्पना है, वह एक अच्छा सद्विचार उसमें जुड़ा है। हमें लोगों को समझाना चाहिए कि हम कुटुंब-संस्था को खत्म नहीं करना चाहते हैं, उसे फैलाना चाहते हैं। हम कुटुंब-संस्था को जितनी बस्ती इकट्ठी रहती है, उतना फैलाना चाहते हैं। कुटुंब में अगर दो-चार मित्र दाखिल होते हैं, तो कुटुंब-भावना टूटती नहीं, बढ़ती है। इसलिए सारे गाँव की मालकियत बनाने में कुटुंब-भावना टूटती नहीं है। ईसा को कहना पड़ा कि "लव दन-अनादर"—जैसा अपने पर प्यार करते हो, वैसा ही पड़ोसी पर प्यार करो या अपने दुश्मन पर भी प्यार करो। शत्रु पर प्रेम करना हो सकता है, क्योंकि उसमें मनुष्य को सावधान रहना पड़ता है। मनुष्य आपस-आपस के संबंध में ही असावधान रहता है। घर में हम एक-दूसरे पर अपना अधिकार मानते हैं। मित्र मदद करने के लिए बंधा हुआ नहीं था। फिर भी प्यार किया, यह हम पर उसका उपकार है, क्योंकि उस पर हमारा कोई अधिकार नहीं है।

हमें केवल सेवा का अधिकार

हमें समझना चाहिए कि दुनिया में किसी पर हमारा अधिकार नहीं है। हमें सिर्फ सेवा करने का अधिकार है। हम आपस-आपस में अधिकार मानते हैं, इसलिए मामला बिगड़ता है। आत्मा अपनी व्यापकता के दर्शन के लिए छटपटा रही है। कोई भी शख्स अपनी देह में तृप्त नहीं रह सकता। यह जो तरह-तरह के कार्य दुनिया में चले हैं, वे आत्मा को व्यापक बनाने के लिए चल रहे हैं। इसलिए समाज की यह स्वाभाविक अवस्था है कि व्यापक आत्मा का काम चले। दस लड़के एक-साथ होकर कितने आनंद से खेलते हैं। उनका आनंद दौड़ने में नहीं है। आनंद तो दस इकट्ठे होने में है। सब लोग एकत्र होकर जो आनंद प्राप्त करते हैं, वह व्यापकता का आनंद है। आत्मा सतत व्यापक बनने के लिए व्याकुल है। यह ग्रामदान उस दिशा में एक कदम है।

हम आरोहण में उत्तरोत्तर चढ़ते चले जाते हैं, तो नये-नये दृश्य दीख पड़ते हैं। छह साल पहले जब भूदान माँगना शुरू किया, तब कहाँ खयाल था कि ग्रामदान शुरू हो जायगा।

थोड़ा-थोड़ा दान माँगते-माँगते छठा हिस्सा शुरू हुआ और उसके बाद ग्रामदान शुरू हुआ। अब तो बाबा तालुकादान, जिलादान माँग रहा है। कुछ लोग कहते हैं कि बाबा लोभी बन गया है। उसका लोभ बढ़ता ही जा रहा है। यह बात सही है। जब तक मनुष्य कुल मालकियत नहीं छोड़ देता, तब तक बाबा का यह आंदोलन समाप्त नहीं होगा। इस मालकियत ने मनुष्य का गला दबाया है, इसके कारण वह अपनी व्यापकता भूल बैठा है। उसका ऐश्वर्य छिन गया है। वह दरिद्री, दुःखी बन गया है। **मालकियत की भावना खत्म होनी चाहिए। केवल भूमि की मालकियत मिटने से कार्य पूरा नहीं होता। कारखाने और मकानों की मालकियत भी मिटनी चाहिए।**

(नेडुंकुलम्, मदुरा २५-३-'५७)

ब्रह्मनिष्ठ रमण महर्षि

यह श्री रमण महर्षि का जन्म-स्थान है। उनसे मिलने का तो हमें मौका नहीं मिला है, परंतु हमारे कई मित्र उनसे मिल चुके हैं और उनके आश्रम में रह चुके हैं। सबका अनुभव यही था कि वे एक ब्रह्मनिष्ठ पुरुष थे। उनके जीवन में, उनकी दृष्टि में, उनके चिंतन में परिपूर्ण समता थी। प्रारब्ध-भोग के अनुसार आखिर में वे रुग्ण हुए थे। उनके डॉक्टर ने उनके लिए विशेष भोजन की सिफारिश की। फलाहार लेने का डॉक्टर का आग्रह था। श्रीमान् लोग उन्हें फल भेजते भी थे और उनका आग्रह भी होता था कि उन्हें वही फलाहार सेवन करना चाहिए। परंतु आसपास के सब लोग जो भोजन करते थे, वही भोजन करने का उन्होंने अन्त तक आग्रह रखा। यदि उनके लिए कोई फल भेजता, तो वे सब लोगों को बाँट देते थे और स्वयं प्रसाद-रूप में ही सेवन करते थे। लोगों ने उनके सामने मिसालें पेश कीं कि 'ऐसे विशेष मौकों पर जो आहार दूसरों को नहीं मिलता, वह सेवन करने में हर्ज नहीं है। और महापुरुषों ने डॉक्टर की सिफारिश से भिन्न आहार सेवन किया भी है।' लेकिन रमण महर्षि ने कहा कि "नहीं, हम तो गरीब का ही आहार लेंगे।" सब लोग जानते हैं कि उनके आसपास रहने वाले लोगों का जो जीवन था, वही उनका जीवन था। चौबीसों घंटा वे लोगों के बीच रहते थे। उनके पास जाने के लिए कोई रुकावट नहीं होती थी। सबके साथ वे बिलकुल समान व्यवहार करते थे। ऐसे महापुरुष का यह जन्मस्थान है। बंगाल में जैसे रामकृष्ण परमहंस हो गये हैं, वैसे ही तमिलनाड़ में रमण महर्षि हो गये हैं। उनके साधुत्व, समत्व, ज्ञान और प्रेम का असर कुल दुनिया पर हुआ है। कुल दुनिया के लोग उनकी ओर आकर्षित हुए हैं। परंतु हम केवल महापुरुषों के गुण गाया करेंगे और अपना जीवन जैसा का तैसा रखेंगे, तो हमारा क्या लाभ होगा? वे महापुरुष भी हमारे जैसे ही सामान्य पुरुष होते हैं। हममें से जो भी व्यक्ति उनके पीछे जाने की कोशिश करेगा, वह वहाँ अवश्य पहुँच सकता है। जितना महापुरुषों का सधा है, उतना भले ही हरएक को न सधे, लेकिन प्रयत्न तो हरेक कर सकता है। ऐसी अच्छी मिसालें अपनी आँखों के सामने रख कर उसके अनुसार बरतने की हमें कोशिश करनी चाहिए।

(त्रिचुली, रामनाड़, २७-३-'५७) —विनोबा

---

www.vinoba.in

महावीर-जयंती के पुण्य-पर्व पर

भगवान् महावीर : एक सामाजिक पुरुष....!

(जैनभिक्षु हस्तीमल "साधक", समन्वय आश्रम, बोधगया)

श्रमण भगवान् महावीर ने सामाजिक जीवन के जितने विरोध हैं, उनके निराकरण को धर्म बता कर आध्यात्मिक संशोधन प्रस्तुत किये हैं।

आप कहते हैं कि "धर्म सर्वश्रेष्ठ, मंगल है। अहिंसा उसका रूप है।"[१] अहिंसा को बुनियाद में व्यष्टि-समष्टि की एकता है। यही सामाजिकता का उद्गम है।

अहिंसा का विवेचन करते हुए भगवान् महावीर बोले—"किसी भी प्राणी का वध करना इसलिए घोर पाप है, क्योंकि सभी प्राणी जीना चाहते हैं।"[२] किसीकी दुर्बलता का लाभ उठाना सामाजिक पद्धति के प्रतिकूल है। पारस्परिक व्यवहारों को सर्वथा अविरोधी बनाना, अहिंसा का प्रथम उद्देश्य है।

सत्य को अपरिहार्यता बताते समय भी उन्होंने यथार्थता को ही युक्तियुक्त माना है—"सत्य ही भगवान है।"[३] "सत्य ही लोक में सारभूत है।"[४] "सत्य की उपासना करो। असत्य को इसलिए त्यागो कि वह अविश्वास का कारण है और समाज तथा सम्मान्य पुरुषों द्वारा निंद्य है।"[५]

मनुष्य को सुख इष्ट है। समाज को भी सुख इष्ट है। अतः हमारी चेष्टा सामूहिक जीवन के अनुकूल होनी चाहिए। समाज के लिए अहितकर चेष्टाओं में चौर्य-भाव नैसर्गिक है। "चोरी समाज में अप्रतीतिकर है, अपयशदायी, अनार्य कर्म है। वह बन्धु-बान्धवों में राग-द्वेष उत्पन्न करने वाली तथा प्रियजन-मित्रजन में भेद करने वाली है।"[६]

भगवान् महावीर सामाजिक धरातल पर ही ब्रह्मचर्य-गुण-विकास के प्रतिपादक थे। "ब्रह्मचर्य प्रशस्त, आत्मवैशिष्ट है, शुभ है, शिव है,"[७] समग्र शुद्धि के साथ ब्रह्मचर्य की साधना इसलिए करो कि अब्रह्मचर्य प्रमाद, नैराश्य, भय, संदेह और असंतुलन का अन्वय है।"[८] निराशा, शिथिलता आदि के कारण सहजीवन शक्य नहीं होता। अतः ब्रह्मचर्य-पालन का अर्थ है—सामाजिक उत्तरदायित्व निभाने के लिए विवेक, विनय, संयम, औदार्य और प्रामाणिकता की संगति।

अपनी विशिष्ट अहंताओं को छोड़े बिना व्यापक हितों का विचार नहीं किया जा सकता। व्यापक हितों का विचार किये बिना 'समदृष्टित्व' नहीं हो सकता और समदृष्टि के अभाव में समता नहीं सधती। असमता के अधिष्ठान पर शोषण, शासन, उत्पीड़न, छल, प्रपंच आदि का संवर्धन ही नहीं होता, वरन् सहजीवन का नाजुक संतुलन भी नष्ट होता है। इन समस्त दोषों से बचने के हेतु बंधन (संकीर्ण सत्व) से मुक्त होना होगा। "मनुष्य के लिए परिग्रह से बढ़कर कोई बंधन नहीं है।"[९]

अनुभूति-संपन्न भगवान् महावीर आचारशील थे। उनका जीवन कथन और करनी में एकसार था। मानव को सामाजिक होने के नाते समाज-सेवा करनी ही चाहिए, ऐसी थी उनकी मान्यता।

समाज के संबंध में वे कितने गहरे पानी में पैठे थे, इसका अनुमान गौतम और महावीर के निम्न संवाद[१०] पर से लगाया जा सकता है।

"दो व्यक्ति हैं। उनमें से एक तो अहर्निश आपकी उपासना में इतना तल्लीन रहता है कि वह दीन-दुनिया से बिलकुल बेखबर है और दूसरा दीन, दुःखी, निराश्रित, पीड़ित लोगों की सेवा में इतना अनुरक्त है कि आपकी सेवा के लिए अवकाश नहीं निकाल पाता। गौतम ने सविनय पूछा—"भन्ते ! इन दोनों में से आपका सच्चा, श्रेयार्थी भक्त कौनसा है ?"

---

(१) धम्मो मंगल मुक्विट्ठं अहिंसा......। [द० १।१]

(२) सव्वेजीवाविच्छंति,जीविउं न मरिज्जिउं। तम्हापाणिवहं घोरं, निग्गंथा वज्जयंतिगं; [द०६।७]

(३) सच्चं खु भगवं [प्र० व्या०]

(४) सच्चं लोगम्मि सारभूयं [प्र० व्या०]

(५) मुसावाओय लोगम्मि, सव्वसाहूहिं गरिहिओ। अविस्साओय भूयाणं, तम्हामोसं विवज्जए [द० ६।१३]

(६) अदत्तादाणं अकीत्तिकरणं, अगज्जं साहुगर हणिज्जं। पियजग मित्तजण भेद विपत्तिकरणं [प्र० १,३:९]

(७) पसत्थं सोमं सुभं सिवं सया विसुद्धं [३०२:४]

(८) अबंभ चरिअं घोरं पमायं दुर हिट्ठिअं। नायरंति मुणी लोए, भेआय यण अज्जिओ [द.६:१६]

(९) नत्थि एरिसो पासो पडिबंधो अत्थि सव्व जीवाण ।

वाणी-विवेक

भगवान् महावीर ने वाणी के उपयोग के लिए व्यावहारिक बातें बताते हुए कुछ ऐसी परिस्थितियों का विवेचन किया है, जिनमें हम अनायास ही लड़खड़ा जाया करते हैं। उन्होंने वाणी का उपयोग करने से पहले प्रत्येक मुमुक्षु व्यक्ति से कहा है कि अनवरत चार बातों का खयाल रखो।

अपुच्छिओ न भासेज्जा, भासमाणस्स अन्तरा।
पिट्ठिमंसं न खाइज्जा, माया मोसं विवज्जए॥ (द. ८ : ४७)

—अर्थात् (१) बिना पूछे मत बोलो, (२) दो व्यक्तियों के वार्तालाप करते समय बीच में मत बोलो, (३) पिशुन-कर्म (चुगली) मत करो और (४) दंभ एवं असत्य से भरी बातें मत कहो।

भासमाणो न भासज्जा णेव वम्भेज्ज मम्मयं।
मातिट्ठाणं विवज्जेज्जा अणुचिन्तिय वियागरे॥ (सू. १,९ : २५)

—मर्मभेदी बातें मत बोलो। उलझन भरी बातें मत बोलो और जो कुछ बोलो, वह सोच-समझ कर बोलो।

तहेव काणं काणेत्ति, पंडगं पंडगत्तिवा।
वाहियं वा वि रोगित्ति तेणं चोरित्ति नो वए॥ (द. ७ : १२)

—काणे (एकाक्षि) को काणा, अन्धे को अन्धा, नपुंसक को नपुंसक, रोगी को रोगी तथा चोर को चोर इत्यादि सम्बोधनों द्वारा, जिससे कि सामने वाले पर बुरी प्रतिक्रिया हो—मत बुलाओ। यह उन्नत अहिंसा का ही स्पष्ट उदाहरण है !

असच्च मोसं सच्चं य अणवज्ज मकक्कसं।
समुप्पेह मसंदिद्धं गिरंभासेज्ज पन्नवं॥ (द. ७ : ३)

—विवेकी पुरुष सदा निर्दोष, अकर्कश, प्रिय, असंदिग्ध, व्यवहार्य व सत्य से परिप्लावित भाषा का ही व्यवहार करे। जहाँ संदेह है, उलझनें हैं, दंभ हैं, वहाँ किसी भी तरह के साधन की कोशिश निरर्थक होती है।

दिट्ठं मिअं असंदिद्धं, पडिपुन्नं विअं जिअं।
अयंपि रमणु विग्गं भासं निसिर अत्तवं॥ (द. ८ : ४९)

—वहीक हिये, जिसे स्वयं देखा हो, जिसके बारे में पूरी जानकारी हो। जो कुछ अच्छी तरह जानते हैं, वही अत्यन्त परिमित शब्दों में अभिव्यक्त करें, ताकि उद्विग्नता न फैले, क्योंकि :

बहु सुणेई कन्नेहिं, बहु अच्छीहिं पिच्छई।
नयं दिट्ठं सुयं सच्चं भिक्खू क्खाउ अमरिहई॥ (द. ८ : २०)

—बहुत-सी बातें कानों से सुनते हैं, बहुत से दृश्य आँखों से देखते हैं, पर क्या सभी कुछ देखा-सुना सर्वत्र कह ही डालना चाहिए ? नहीं। देखी-सुनी विश्वस्त बातों से भी लाभप्रद तथा अत्यन्त आवश्यक तथ्य ही प्रकट करना चाहिए।

गुणेहि साहू अगुणेहिऽसाहू, गिण्हाहि साहू गुण मुंचऽसाहू।
वियाणिया अप्पगमप्पएणं जो राग दोसे हि समोसपुज्जो॥ (द. ९/३ : ६)

—जो व्यक्ति अवगुणों की दिवाल से न टकरा कर गुणों के पथ से प्रविष्ट होता है तथा स्वयं को पहचानने का प्रयत्न करता है, वही समदर्शी पूज्य है। आज हमारी वृत्ति ऐसी बन गयी है कि कहीं किसीमें छोटा-सा दोष हो, तो वह पहाड़-सा दीख पड़ता है और विशालतम विशेषताएँ क्षुद्रतम दीख पड़ती हैं। हमें यही वृत्ति परिवर्तन करनी है। जब यह संभव होगा, तब अपने आप वाणी में माधुर्य टपकने लगेगा।

—"साधक"

(पहले कॉलम का शेषांश)

"दूसरा है गौतम !" मुस्कराते हुए भगवान् महावीर बोले—"मेरी सेवा की अपेक्षा दीन-हीनों की सेवा करना श्रेष्ठ है। आर्तों को देखते ही जिसका अन्तःकरण अनुकम्पा से आप्लावित हो जाता है, जो दलितों पर द्रवित होता है, अनाथों, असहायों और अबलों को अपनत्व देता है, प्राणी मात्र को सुख, स्नेह, सौजन्य एवं साता पहुँचाता है, वही आज्ञावर्ती है। आज्ञावर्ती धार्मिक है।"—"धर्म आज्ञा में है।"[११]

भगवान् महावीर अध्यात्म के उच्च शिखर पर अवस्थित सामाजिक जीवन का अत्यन्त सूक्ष्मतापूर्वक चिंतन, मनन तथा अनुशीलन करने वाले क्रान्तदर्शी युगपुरुष थे !

---

(१०) उत्तराध्ययन अ. २९, सवार्थ सिद्धिवृत्ति।

(११) आणाए मामगं धम्मं (आचाराङ्ग)

www.vinoba.in

विज्ञान, आत्मज्ञान और सर्वोदय

(विनोबा)

सब कानूनों से बढ़कर हृदय का एक कानून है। वह है—प्रेम का कानून। सवाल यह है कि प्रेम का कानून तो परिवार में चलता है, परंतु जहाँ परिवार खत्म होता है और पड़ोस शुरू होता है, वहाँ एकदम होड़ का कानून चलता है। घर में सहयोग है, प्रेम है, घर में व्यक्तिगत मालकियत नहीं है। परंतु उससे बिलकुल सटा हुआ दूसरा घर है, उसके साथ हमारा कोई संबंध नहीं! उस घर की मालकियत अलग, इस घर की मालकियत अलग। इसलिए उस घरवाले दुखी हैं, तो उसके दुख का वह जिम्मेवार। हिंदुस्तान में तो एक और बात चलती है कि वह दुखी है, तो अपने पुराने कर्मों का फल वह भोग रहा है। पूर्वजन्म का यह खयाल गलत है। एक गाँव में रहते हैं, तो हमारा सबका एक सम्मिलित कर्म है। उसका कर्म अलग, मेरा कर्म अलग, यह समझना बिलकुल गलत है। जहाँ कर्म का ताल्लुक है, वहाँ समझना चाहिए कि हम सब एक-दूसरे को मदद करने के लिए यहाँ आये हैं। तो पड़ोसी की मालकियत अलग और मेरी मालकियत अलग, ऐसा क्यों मानें? हवा और पानी पर क्या किसीकी मालकियत हो सकती है? फिर जमीन पर क्यों होनी चाहिए? वह परमेश्वर की पैदा की हुई चीज है, इसलिए सबके उपभोग के लिए वह मिलनी चाहिए। हिंदुस्तान की खूबी यह है कि वह व्यक्तिगत मालकियत मानता ही नहीं है।

धर्म द्वारा भेदों का जन्म

हिंदुस्तान में मुख्य अड़चन धर्म की है। हिंदू धर्म ने अनेक जातियाँ बनायीं। गाँववालों के लिए यह सवाल पैदा होता है कि इतनी सारी जातिवाले, इतने धर्मवाले एक कैसे होंगे? यह इतने दुर्दैव की बात है कि जो धर्म एकता पैदा करने के लिए हुए, उन्होंने ही भेद पैदा किये। याने ये धर्मवाले अपने छोटे-छोटे गुट बना कर बैठ गये हैं और वे भेद-भाव पैदा करने में मदद दे रहे हैं। यह हिंदू हैं और वह मुसलमान! हिंदू में भी यह वैष्णव है और वह शैव! वैष्णव में भी यह ब्राह्मण है और वह हरिजन! मुसलमान में यह शीआ है और वह सुन्नी! ईसाई में भी यह रामन कैथोलिक है और वह प्रोटेस्टेंट! इन धर्मों ने सारी दुनिया बर्बाद कर दी, यह कहने में हमें बहुत दुख होता है, क्योंकि धर्म पर हमारी श्रद्धा है।

धार्मिक एकता का वर्तमान स्वरूप

हैदराबाद के एक साधु पुरुष की ४०० साल पहले की कहानी है: उन्होंने एक मंदिर बनवाया, पर देखा कि मंदिर में हिंदू लोग आते थे, मुसलमान नहीं आते थे। उन्हें लगा कि यह एकांगी सेवा होती है, पूरी मानवता की सेवा नहीं होती है। मुसलमानी राज्य है, तो शायद मस्जिद बनाने से सब लोग आयें, यह सोच कर उन्होंने मंदिर की मस्जिद बनवायी! मुसलमान खुश हो गये। वे आने लगे, परंतु हिंदुओं ने आना छोड़ दिया। अब वह साधु सोचने लगा कि मस्जिद बनाता हूँ, तो हिंदू नहीं आते, मंदिर बनाता हूँ, तो मुसलमान नहीं आते। लेकिन मैं तो सारी दुनिया की सेवा करना चाहता हूँ। इसलिए उसने मस्जिद तोड़ कर पाखाना बना दिया। बादशाह यह देख कर गुस्सा हो गया। मुसलमान लोग चिढ़ गये। उसे बुला कर पूछा, "तुमने यह क्या किया? मस्जिद तोड़ कर पाखाना क्यों बनाया?" साधु ने कहा, "जब मैंने मंदिर बनाया, तो उसमें मुसलमान नहीं आते थे, उसे तोड़ कर मस्जिद बनायी, तो उसमें हिंदू लोग नहीं आते थे। परंतु जब से मैंने मस्जिद तोड़ कर पाखाना बनाया है, तब से दोनों आते हैं। इसलिए मैं मानता हूँ कि मैं यह सेवा का कार्य कर रहा हूँ।" इसका नाम है—"सेक्यूलीरिज्म" और इस तरह लोग धार्मिक एकता बढ़ाते हैं।

होना तो यह चाहिए कि भिन्न-भिन्न धर्मवाले दुनिया में से नास्तिकता को मिटायें, द्वेष को मिटायें, प्रेम बढ़ायें, सहयोग बढ़ायें। उसके बदले में वे ही उसे तोड़ते हैं। भगवान् ने जाति या धर्म पैदा नहीं किये, भगवान् ने तो मानवता पैदा की। इसलिए मानवता के वास्ते मिल कर रहना ही सच्चा धर्म है। सबको अपना हृदय एक बनाना चाहिए। सच्चा धर्म यही है कि मानवता आगे बढ़े और मानवों में टुकड़े न पड़ने दें। हमारे मार्ग में मुख्य बाधा धर्म के नाम से संकुचित भावना का रूढ़ होना ही है। खुले आसमान के नीचे हम प्रार्थना के लिए बैठते हैं, तो दिल बिलकुल विशाल हो जाता है। किसी मंदिर, मस्जिद या चर्च में जाते हैं, तो वहाँ हमारा दिल छोटा हो जाता है, पर होना तो उल्टा चाहिए। लोगों के व्यवहार में जो भेद-भाव है, उसे तोड़ने के लिए धर्म है।

धर्म के तीन सूत्र

माणिक्यवाचकर मुझे बहुत दफा याद आता है। उसने कहा कि अज्ञान पर हमला होना चाहिए। आज अज्ञान पर विज्ञान जितना हमला कर रहा है, उतना धर्म नहीं कर रहा है। दूसरी बात उसने यह बतायी कि दुनिया में कोई दूसरा रूप नहीं है। जो कुछ है, वह सब मेरा ही मेरा रूप है। तीसरी बात उसने यह बतायी कि 'मैं और मेरा' मिटाओ और उसकी जगह "हम और हमारा" कहो। यह शुद्ध धर्म का वाक्य है। आत्मज्ञान की नींव पर समाज को खड़ा करना चाहते हैं। विज्ञान से धर्म-भ्रम जायेगा, आत्मज्ञान से भेद मिटेगा और सर्वोदय की सामाजिक रचना से "मैं-मेरा" जायगा। विज्ञान, आत्मज्ञान और समाज की सर्वोदय-रचना, यही तीन बातें हमें करनी हैं। परिवार गाँव तक बढ़ेगा, तो मनुष्य का अधिक विकास होगा, परंतु जैसा मैंने कहा कि यह काम प्रेम से समझा-बुझा कर होना चाहिए, जबर्दस्ती से नहीं।

जबर्दस्ती अवांछनीय

कम्युनिस्टों में और हममें यही फर्क है। वे समझते हैं कि अगर अच्छी चीज है, तो जबर्दस्ती से भी कर लेंगे, तो अच्छा ही फल आयेगा! पर यह तो मानसिक व्याधि है। इसलिए लोगों को समझाने से ही यह व्याधि दूर हो सकेगी। मानसिक व्याधि का उपाय जबर्दस्ती से नहीं हो सकता।

मान लीजिये कि लोग रास्ते में जगह-जगह कचरा डालते हैं। नगरपालिका यह नियम करे कि ऐसा करने वालों को दंड होगा, तो मैं मानता हूँ कि इससे लाभ होगा। वह जबर्दस्ती लाभ की है, क्योंकि वह शारीरिक व्याधि है। परंतु परिवार की भावना फैलानी चाहिए, व्यक्तिगत जिम्मेवारी कायम रहनी चाहिए, ऐसा कानून जबर्दस्ती से नहीं होता है। सद्विचार जबर्दस्ती से नहीं फैलाया जा सकता है। ग्रामदान, मालकियत मिटाने आदि का विचार जबर्दस्ती से फैलाया जायगा, तो उससे हानि होगी। हम पैदल इसलिए घूमते हैं कि सद्विचार जबर्दस्ती से नहीं, प्रेम से समझाना पड़ता है।

एक लड़के ने गेहूँ का दाना बोया। दो घंटे के बाद देखने लगा कि वह उगा है या नहीं। दो-दो घंटे के बाद सतत वह तीन दिन देखता रहा, परन्तु वह उगता हुआ नहीं दिखा, तो आखिर ऊब कर उसने उसे बाहर खींच लिया। भला, अब वह बढ़ेगा? जबर्दस्ती का यह परिणाम होता है कि खींचने से वह जल्दी हाथ में आता है, लेकिन उसका गेहूँ खत्म हो जाता है। आप अगर कानून से, जबर्दस्ती से परिवर्तन लाना चाहते होंगे, तो वह इसी ढंग का होगा।

(पुलीनायकम्पट्टी, मदुरा, २३-३-'५७)

बहनों से–

सन् १९५४ में विनोबाजी जब दरभंगा जिले का दौरा कर रहे थे; उस समय हम लोग भी प्रचार के लिए गाँव-गाँव घूम रही थीं। दरभंगा जिले के सादीपुर गाँव में एक घर की माँ ने कहा कि "क्या करूँ बेटी, मन तो बहुत चाहता है कि एक बैलगाड़ी पर चढ़ कर सभी बेटी और पतोहू को लेकर बाबा के दर्शन करने जाऊँ। लेकिन हमारे पतिदेवजी का विचार नहीं है।" हम लोगों ने कहा कि हम उन्हें समझा देंगे, तो वे आपको स्कूल पर जाने देंगे। हमने बाहर दालान पर भाइयों के पास बैठ कर बातचीत करते हुए उन बहनों की इच्छा जाहिर की। पहले तो उस बहन के पति ने कहा कि 'हम किसी हालत में स्कूल पर नहीं जाने देंगे।' फिर हमारी टोली की एक बहन ने कहा कि लोग कहते हैं कि पति सुख देने वाले होते हैं, इच्छा पूरी करते हैं, तो मैं देख रही हूँ कि ये पति भी विपत्ति बन रहे हैं! इस बात को सुन कर सभी लोग हँस पड़े। फिर उन्होंने अपनी पत्नी और बहनों को जाने का वचन दिया। सभी को लेकर वह स्वयं बाबा की सभा में उपस्थित हुए। वह बहन बाबा के भाषणों से इतनी द्रवित हुई कि अपने पतिदेव से आग्रह करके अपनी जमीन का छठा हिस्सा भी दिलवाया और अपने जेवरों को भी सम्पत्ति-दान में दे दिया।

भूदान-यात्रा के सिलसिले में हमने देखा है कि बहनों के जरिये कितने ही ऐसे काम, जिनके न होने की सम्भावना रहती, हो जाते हैं। इसलिए मैं आशा करती हूँ कि बहनें सन् '५७ की क्रांति को सफल बनाने के लिए बाहर आवेंगी। बहनों के प्रयास से जरूर समाज का नक्शा बदलेगा। उनमें बहुत ताकत है। यदि हमारी बहनें अपने कर्तव्य को अपनायेंगी, तो उनकी ताकत सबके लिए प्रेरक बन कर रहेगी।

सर्वोदय-आश्रम, सोखोदेवरा (गया) —कौशल्यादेवी झा

---

www.vinoba.in

हमारा ध्यानमंत्र

(काका कालेलकर)

यस्मिन् सर्वाणि भूतानि आत्मा एव अभूद् विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वम् अनुपश्यत ॥

ईशोपनिषद के इस मंत्र का अर्थ है, जिस अवस्था में ज्ञानी पुरुषों को चराचर भूतमात्र, सबके सब आत्मा के जैसे ही दीख पड़ते हैं, आत्मा ही बन जाते हैं, उस अवस्था में विश्वात्मैक्य का साक्षात्कार होने पर शोक और मोह कहाँ रह सकते हैं ?

योग की या वेदान्त की साधना करने पर चिंतनशील मनुष्य आत्मा और अनात्मा का स्वरूप और भेद समझ लेता है और बाद में इसे सर्वत्र एक परमात्मा का ही दर्शन होने लगता है।

जीवन की साधना भी इसी ढंग की होनी चाहिए। सबके साथ हृदय का ऐक्य स्थापित होने पर अपना और पराया, ऐसा भेदभाव गल जाता है। जिस तरह हम अपने निजी दोष पहचानते हुए भी अपने प्रति तिरस्कार नहीं रखते, अपने पर क्रोध नहीं करते, अपना बुरा हो, ऐसी इच्छा भी नहीं करते, उसी तरह अपने आसपास के, नजदीक के और दूर के सब लोगों के प्रति आत्मीयता का उदय होने से सर्वत्र क्षमा की और प्रेम की दृष्टि से ही हम देखने लगते हैं।

अपना प्रिय पुत्र अज्ञानवश अथवा सन्निपात होने पर जब चाहे सो बकता है, मारने को दौड़ता है, न करने को करता है, तब हम उसके प्रति क्रोध नहीं करते, दयाभाव से उसकी सेवा ही करते हैं और रोगमुक्त करने के लिए उसे दवा देते हैं और दूसरा कुछ न हो सका, तो उसकी सारी हरकतें बरदाश्त करके उसके हित के लिए प्रार्थना ही करते हैं, उसी तरह विश्वात्मैक्य की भावना करने पर अपना विरोध करने वाले और दुश्मन कहलाने वाले लोगों के प्रति भी प्रेम और क्षमा की वृत्ति ही रखी जाती है।

फिर तो परिवार के अन्दर हो, समाज में हो, जाति-जाति के बीच हो या वंश-संघर्ष के दारुण प्रसंग में हो, चिढ़, द्वेष या अशुभ भावना मन में उठती ही नहीं। जिस तरह मरीज का द्वेष किये बिना उसका इलाज किया जाता है, उसी तरह आन्तरराष्ट्रीय संघर्ष के समय पर भी एक ही भाव मन में रहता है कि जो भी व्यक्ति अथवा राष्ट्र हमारा नुकसान करता है, हमारा नुकसान करने पर तुला हुआ है, उसका भी हम भला ही चाहेंगे। बुराई करने से उसे रोकेंगे जरूर, लेकिन उसमें उसे आरोग्य के पथ पर लाने की ही कोशिश रहेगी।

विश्व के मनीषियों ने राष्ट्रसंघ की (यूनो की) स्थापना की। लेकिन उसके सदस्यों में ऐक्य-भावना नहीं है, वंश-वंश के बीच भेद कायम करने की नीति जोरों से चल रही है। अपना-अपना स्वार्थ साधने की बात तो है ही। इसके अलावा दूसरों का द्वेष भी है, तिरस्कार भी है। यह सब अगर धीरे-धीरे निकल जाय और सबके प्रति विश्व-कुटुम्ब-भाव जागृत हो जाय, तो फिर उसके विचार, उसके प्रस्ताव और उसकी कृति में मोहमूलक अन्याय नहीं आयेगा और मलीन स्वार्थ डूब जाने पर शोक भी नहीं होगा। न्यायतः जो जिसकी चीज है, उसके पास उसे रख देने की तैयारी होगी। फिर तो किसीके प्रति पक्षपात, औरों के प्रति जुगुप्सा, तिरस्कार और अपमान का भाव मन में नहीं रहेगा। ऐसा विश्व-कुटुम्ब-भाव दुनिया में पैदा करना है। एक-दूसरे के भय से जो शान्ति रखी जाती है, वह कहाँ से कायम रहेगी ? प्रेम, आदर की जब वृद्धि होगी, एक कुटुम्ब के जैसा रिश्ता होगा, तब शान्ति और मानवता की स्थापना हो सकेगी।

आत्मीयता के द्वारा जब अनेकों में एकता का दर्शन होगा, तभी युद्ध की प्रेरणा करने वाले मोह और शोक, द्वेष और क्रोध नष्ट होंगे। इसके लिए समाज की रचना भी बदलनी होगी और राष्ट्र-राष्ट्र के सम्बन्ध भी सुधारने होंगे।

जब दिल से हम सब लोगों को—अपवादरहित सब लोगों को अपनाते हैं, तब हमारे मन में किसीके बारे में भी पक्षपात नहीं रहता। फिर तो अपने के लिए एक न्याय, दूसरे के लिए दूसरा न्याय, ऐसा भेद नहीं रहता। सबका कल्याण, सबका उदय जो चाहते हैं, वे न्यायनिष्ठ और क्षमावान होते हैं। क्षमा के बिना न्याय सम्पूर्ण हो नहीं सकता। आज की दुनिया और आज की संस्कृति न्याय के साथ सजा को जोड़ देती है, यह बड़ी भूल है। जो मोहरहित और शोकरहित है, वही क्षमायुक्त न्याय यानी सर्वोत्तम न्याय का पालन कर सकता है।

('मंगल प्रभात' से)

ऐसे हैं हमारे वनवासी बालक !

(अनसूया बजाज)

उड़ीसा के आदिवासी क्षेत्र में लड़का-लड़की के जन्म की खुशी में कोई खास फरक नहीं रहता। माता-पिता बच्चों का खूब आदर करते हैं। मैंने उन्हें कभी भी बच्चों को मारते-पीटते नहीं देखा। बच्चे तो उनके-हमारे, सभी के एक-से होते हैं। सुबह उठते हैं, माँ न दिखी, तो रोते हैं। लेकिन माता-पिता के पीटने से ज्यादा रोना, जो हमारे शहरों में बिगड़े हुए गाँवों में चलता है, वह यहाँ नजर नहीं आया। उनके जीवन में आडंबर, झूठा लाड़-प्यार नजर नहीं आया। बेदंगा प्यार, मुंह चूमना आदि भी देखने में नहीं आया। बच्चों के साथ झूठ बोलना, उनको फँसाना आदि बातें भी नहीं होतीं। माँ-बच्चे का नाता दुनिया में एक-सा ही है। राजा का बेटा राजा को 'राजा-बेटा' है, तो गरीब का अपना बेटा भी राजा-बेटा ही है।

बच्चे माता-पिता के साथ ही काम में अधिक समय बिताते हैं। काम में लगे रहते हैं। माँ पानी लेने जाती हैं, ४-५ साल से ७-८ साल तक के लड़के-लड़की कोई न कोई बरतन लेकर उनके साथ जाते हैं। बड़े बच्चे सुबह गाय-बकरी चराने चले जाते हैं। कंकड़, पत्थर, इमली के बीज आदि खेल खेलते हैं। पेड़ों पर झूलते हैं, नाचते हैं। छोटे बच्चे काफी समय तक माँ के पास कपड़े में बँधे रहते हैं। माताओं को बच्चों को लिये हुए सब तरह के काम करने की आदत है। उसे बाँधे-बाँधे माँ पानी लाती है, खेत में काम करती है, मिट्टी इधर से उधर फेंकती है, बच्चा ये सब बातें टुकुर-टुकुर देखता रहता है। भूख लगी, तो दूध पी लेता है—एकदम बादशाह ! यहाँ के बच्चों में बड़ी अच्छी आदतें हैं। वे न तो आपस में लड़ते-झगड़ते हैं और न मारपीट करते हैं। वे खाने की चीज के लिए कभी जिद नहीं करते। श्री मित्तलजी ने तो मुझे बताया कि मैं यहाँ साल भर से रहता हूँ, पर मैंने कभी यहाँ वालों को बच्चों को पीटते नहीं देखा। बच्चे कभी-कभी जिद नहीं करते, खाने की चीज माँगने के लिए वे किसीके सामने हाथ नहीं पसारते। खाने के समय किसीके दरवाजे पर वे खड़े नहीं दिखायी देंगे। वे जहाँ-तहाँ गंदगी नहीं करते। टट्टी से पैर खराब होगा, इसका उन्हें डर नहीं। शौच जरा दूर ही जाने की आदत है। पेशाब भी बाजू में जाकर करते हैं। घर के अगल-बगल जगह है ही नहीं। थूकना इन सभी का जरा विशेष है। अपने यहाँ कौन कम थूकते हैं ? साधारणतया बच्चों का स्वास्थ्य ठीक लगा। छोटी उमर में पेट कुछ बढ़ा होता है, बाद में काम में लगने पर ठीक हो जाता है। इनके लिए दूध की खुराक केवल माँ का दूध है। ३-४ साल तक लड़के-लड़की करीब-करीब नंगे ही रहते हैं। बाद में १३-१४ साल तक वे लंगोटी ही लगाते हैं। पुरुषों को तो सदा लंगोटी ही रहती है। मैं १५-२० गाँवों में घूमी। पूछताछ से पता लगा कि बड़ी उम्र के लड़के-लड़कियों में दुराचार नहीं है। इस बात का भी उत्तम संस्कार है। पुरुष स्त्रियों को मारते-डाँटते नहीं। आदिवासियों का यह सारा हिस्सा कितना संस्कारी है। हमारे सुधरे हुए समाज में सभी बातें इनसे उलटी हैं। मेरे मन में विचार आता है कि ये आदिवासी पिछड़े हुए या हम ? इनमें और हममें क्या फरक है ? सभी बातें एक-सी ही हैं। इनके भी ३-४-५-६ बच्चे होते हैं। वही देवी-देवता, पूजन, मुरगी मारना आदि चलता है। इनके पास मंदिर नहीं है। अदृश्य दैवी शक्ति में ये लोग विश्वास करते हैं। रहन-सहन, घर-द्वार, बच्चे, भूत-पिशाच आदि सारी बातें हमारी-उनकी एक ही हैं। लेकिन कुछ बातों में इनका बड़ा ही नैसर्गिक जीवन होता है। बना-बनाया बाल-मंदिर बुनियादी शिक्षण है। खाने के साथ-साथ उद्योग और बौद्धिक खुराक की आवश्यकता है। एक जमाने में ये सब बातें रही होंगी। वही जमाना भारत का उन्नत काल रहा होगा। इन्हींमें से साधु-संत निकले होंगे। शिक्षा का उनमें लोप हो गया है। शोषक-वर्ग उनका शोषण कर-करके उन्हें पिछड़ा बताता है, लेकिन मैंने उनमें जीवन के उत्तम संस्कार देखे।

(पत्र से)

बापू और बच्चे

चि० प्रताप बच्चा था। एक दिन बापू की कमर से लटकती हुई घड़ी देख कर उसके लिए मचल गया और अपनी माँ की साड़ी पकड़ कर रोने लगा। बापू जहाँ सबके लिए स्नेहपूर्ण हृदय और बच्चों के प्रति अत्यंत कोमल भाव रखते थे, वहाँ वे यह भी मानते थे कि बच्चों की भी अनुचित माँग पूरी नहीं करनी चाहिए और उन्हें सच्ची तालीम देकर सही रास्ता दिखाना चाहिए। अतः वे प्रताप के पास आये और उसके कान से घड़ी लगा कर कहने लगे, 'देखो, कैसे टिक-टिक बोलती है। मगर यह तेरा खिलौना नहीं, मेरा है। तुझे नहीं मिलेगा।' फिर तो जब बापू और प्रताप मिलते तो दोनों एक-दूसरे को 'टिक-टिक' कह कर संबोधन करते, यह क्रिया दोहरा दी जाती और मामला शान्त हो जाता।

—रामनारायण चौधरी

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

१२ अप्रैल सन् १९५७

लोकनागरी लिपि *

तमीलनाड में अहींसात्मक शांतीमय क्रांती !

(वीनोबा)

प्रेम से समझाने की बात है। गांव में भूमीहीनों को जमीन मीलेगी, तो उनके बच्चों को भी पोषण मीलेगा और सारा गांव एक परीवार के मुआफीक रहेगा। तमीलनाड में २०० से ज्यादा ग्रामदान हो चुके हैं। जब हम उडीसा में घूमते थे, तब हमें एक भाई ने लीखा था की तमीलनाड के नेताओं की मान्यता है की तमीलनाड में जरूर ग्रामदान होगा; क्योंकी तमील साहीत्य में कहीं भी मालकीयत को मान्यता नहीं है। दूसरा कारण यह है की तमीलनाड के छोटे-छोटे गांव भी मंदीर के ईर्दगीर्द बसे हुए हैं। ईसका अर्थ है की अपना सारा गांव भगवान् को समर्पण करने की भावना उनमें है। तीसरा कारण यह है की तमीलनाड की हालत ऐसी है की गांव वालों को एक होना ही पड़ेगा, तभी वे टीक सकेंगे। यह हालत करीब-करीब सारे भारत की है। जमीन कम और लोग ज्यादा, ईस वास्ते तमीलनाड में ग्रामदान होगा, ऐसा मुझे वीश्वास था। जब हमने शुरू में यहां प्रवेश कीया, तब छह महीने तक कुछ नहीं चला।

मेरे साथीयों ने दो महीना लगातार एक कुआं खोदने का काम शुरू कीया था। सीर्फ पसीना बहता था, पानी की एक बूंद के भी दर्शन नहीं होते थे। दो महीने खोदने के बाद पानी नीकला। वैसे ही यहां छह महीने हमने खोदने का काम कीया और पसीना बहा। आखीर मदुरा में ग्रामदान हुए और लोगों का उत्साह बढ़ा। ५०० गांववालों ने संकल्प कीया की वे ग्रामदान करेंगे। यह एक अहींसात्मक शांतीमय क्रांती हो रही है। अभी तक कुल हींदुस्तान में २२०० से ज्यादा ग्रामदान मील चुके हैं। कोरापुट में तो ग्रामरचना का काम भी शुरू हो गया है। परदेश के लोग उसे देखने आते हैं। परंतु हींदुस्तान के अखबारों को उसकी कोई कीमत ही नहीं है! वे मामूली मीनीस्टर का भाषण चार-चार कालम में देंगे और ग्रामदान का समाचार कीसी कोने में देंगे। २००० तो छोड़ दीजीये, १०० गांव भी कत्ल करके, जबरदस्ती से छीन लीये जाते, तो सारी दुनीया में वह खबर पहुंच जाती। परंतु प्रेम से और शांती से सब लोगों ने रहने का तय कीया, तो उसकी कोई कीमत नहीं है! लोग पहचानते नहीं हैं की यह क्रांती हो रही है।

(एस्. पी. नत्तम्, मदुरा, २४-३)

* लिपि-संकेत : ि = ी; ै = ॆ; ख = ख; संयुक्ताक्षर हलंत-चिह्न से

सर्वोदय की दृष्टि :

वृद्ध दंपती अणु-परीक्षण-क्षेत्र में यात्रा करेंगे

वॉरसेस्टर (पश्चिम इंग्लैंड), २६ मार्च, '५७ का समाचार है कि एक क्वेकर-पंथीय ब्रिटिश दंपती ने यह निश्चय कर लिया है कि क्रिश्चियन आइलैंड के खतरनाक इलाके में वे उस वक्त जलयात्रा करेंगे, जब कि ब्रिटेन अणु-अस्त्रों का परीक्षण करेगा। वे इसके लिए जापान से 'चल दो' के संकेत का इंतजार कर रहे हैं।

तिरसठ वर्षीय श्री हॅरॉल्ड स्टील, जो कि एक सेवानिवृत्त सिविल सर्वेंट हैं और उनकी उनतालीस वर्षीया पत्नी ने बुद्धिपूर्वक अणु-प्रभावित क्षेत्र में जाकर अंग-भंग करा लेने का निश्चय किया है। उद्देश्य यह है कि "इस आसुरी उपकरण के राक्षसी परिणामों से जगत परिचित हो।"

वे अपनी तीन संतानों को संभालने का भार अपने क्वेकर मित्रों को सौंप देंगे और अपने जीवन में बचायी हुई ८४०० पौंड की रकम जापान तक हवाई जहाज से जाने में खर्च करेंगे। परीक्षण-क्षेत्र में यात्रा करने वाले 'शांति-नाविक-दल' में शामिल होने की आशा से वे जापान जा रहे हैं।

वे कहते हैं, "अगर हम मौत से बच सकें, तो बचना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि या तो हमारा अंगभंग हो या अणुकिरणों से पैदा होने वाली बीमारियों से हम पीड़ित हों, जिससे कि हम लौट कर दुनिया को दिखा सकें कि ये बम कितने आसुरी हैं।"

उनका यह कहना है कि जापानी दूत-मंडल ने उनको यह हिदायत दी है कि उन्हें किसी जापानी नागरिक से निमंत्रण मिलने पर ही "विसा" ('अनुमति-पत्र') पा सकेंगे। श्री स्टील और श्रीमती स्टील अब उस निमंत्रण की प्रतीक्षा में हैं। श्रीमती स्टील अपने पति से सहमत हैं। वे कहती हैं—"यह निर्णय कोई आसान नहीं है। अपनी निष्ठा के लिए प्राण संकट में डालने का निर्णय कोई आसानी से नहीं कर सकता, परन्तु मैं जानती हूँ कि हम सही काम कर रहे हैं।"

'रायटर' द्वारा प्राप्त यह समाचार २८ मार्च, १९५७ के 'सर्च लाइट' में प्रकाशित हुआ है। अब तक अनेक वैज्ञानिकों ने दूसरे प्राणियों या दूसरे मनुष्यों को अपने प्रयोगों का विषय बनाया। परंतु कुछ ऐसे मानव-प्रेमी, उदार-हृदय वैज्ञानिक भी हुए, जिन्होंने स्वयम् अपने शरीर पर वैज्ञानिक प्रयोग और परीक्षण किये। ये विज्ञान के हुतात्मा हैं। विज्ञान का उपयोग सामाजिक शांति के विकास के लिए हो, यह आज के युग की आकांक्षा है। शस्त्र-विद्या और अस्त्र-विद्या के विकास के लिए विज्ञान का उपयोग जब होता है, तब उसके परिणाम कितने अनर्थकारक हो सकते हैं, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण उपस्थित करने के लिए श्री स्टील और श्रीमती स्टील आत्मबलिदान के लिए सिद्ध हैं। शांतिमय वीरता का यह एक अभिनंदनीय उदाहरण है।

—दादा धर्माधिकारी

भू-क्रांति का लक्ष्य

मैं मानता हूँ कि जो कुछ कर रहा हूँ, वह इतिहास के प्रवाह के विरुद्ध नहीं, बल्कि ऐतिहासिक आवश्यकता है। समय की माँग है। मेरा उद्देश्य क्रांति को टालना नहीं है। मैं हिंसक क्रांति से देश को बचाना और अहिंसक क्रांति लाना चाहता हूँ। हमारे देश की भावी सुख-शांति भूमि-समस्या के शांतिमय हल पर ही निर्भर है। मैं ऐसी हवा पैदा करने की कोशिश कर रहा हूँ, जिसमें कानून के बंधनों से हमारा काम रुका नहीं रहेगा। मैं तो श्रीमानों से सीधे जमीन लेता हूँ और गरीबों को सीधे दे देता हूँ। जमींदारों को इस बात पर राजी किया जा सकता है कि उन्हें पूरा मुआवजा नहीं मिल सकता है। जितना उनके लिए पर्याप्त है, उतना ही लेकर उन्हें संतोष करना चाहिए।

अगर भूमिवान अपनी भूमि स्वेच्छा से नहीं छोड़ते और भूमि-सुधार-कानून के लिए अनुकूल वातावरण भी तैयार नहीं किया जाता, तो तीसरा रास्ता खूनी क्रांति का है। मेरी कोशिश ऐसी अहिंसक क्रांति रोकने की है। तेलंगाना तथा उत्तर प्रदेश के अपने अनुभवों के बाद शांतिमय उपायों की सफलता में मेरा विश्वास और भी दृढ़ हो गया है। मैं परिवर्तन चाहता हूँ। प्रथम हृदय-परिवर्तन, फिर जीवन-परिवर्तन और बाद में समाज-रचना में परिवर्तन लाना चाहता हूँ। इस तरह त्रिविध परिवर्तन, तिहरा इन्कलाब मेरे मन में है।

—विनोबा

www.vinoba.in

अलका नगरी में मानवीय मूल्यों का प्रतिष्ठान

(जमनालाल जैन)

आचार्य जिनसेन के 'महापुराण' नामक विशालकाय ग्रन्थ में एक पौराणिक नगरी का वर्णन है। यह अलकापुरी कहाँ और किस युग में थी, नहीं बताया जा सकता। जिनसेन आठवीं शताब्दी के जैन महात्मा हो गये हैं, जो संस्कृत भाषा के महापंडित थे। उन्होंने अलका नगरी का जो वर्णन प्रस्तुत किया है, वह साहित्यिक होते हुए भी मानवीय मूल्यों के शाश्वत सत्य की ओर संकेत करने वाला है।

गृहेषु दीर्घिका यस्यां कलहंसविकूजितैः।
मानसं व्याहसंतीव प्रफुल्लाम्भोरुहश्रियः॥ १११॥

—उस नगरी के प्रत्येक गृह में फूले हुए कमलों से शोभित अनेक वापिकाएँ हैं। उनमें कलहंस (बत्तख) मनोहर ध्वनि करते हैं, जिनसे मालूम होता है, मानो वे मानसरोवर की हंसिनी ही हों।

स्वच्छाम्बुवसना वाप्यो नीलोत्पलवतंसकाः।
भान्ति पद्मानना यत्र लसत्कुवलयेक्षणाः॥ ११२॥

—यहाँ की अनेक वापिकाएँ स्त्रियों के समान शोभायमान हो रही हैं, क्योंकि स्वच्छ जल ही उनका वस्त्र है, नीलकमल ही कर्णफूल हैं, कमल ही मुख है और सुन्दर कुवलय ही नेत्र हैं।

यत्र मर्त्या न सन्त्यज्ञा नाङ्गना शीलवर्जिताः।
नानारामा निवेशाश्च नारामाः फलवर्जिताः॥ ११३॥

—उस नगरी में कोई भी मनुष्य अज्ञानी नहीं है, कोई स्त्री शीलरहित नहीं है, कोई घर ऐसा नहीं है, जिसमें बगीचा (वाटिका) न हो और कोई बगीचा ऐसा नहीं, जिसमें फल-फूल न हों।

जिनार्हत्पूजया जातु जायन्ते न जनोत्सवाः।
विना संन्यासविधिना मरणं यत्र नाङ्गिनाम्॥ ११४॥

—उस नगरी में कभी ऐसे उत्सव नहीं होते, जो जिन-पूजा के बिना ही किये जाते हों तथा संन्यास-विधि के बिना कोई भी मनुष्य मृत्यु को प्राप्त नहीं होता।

सत्यान्यकृष्टपच्यानि यत्र नित्यं चकासति।
प्रजानां सुकृतानीव वितरन्ति महत्फलम्॥ ११५॥

—उस नगरी में धान के खेत निरन्तर शोभायमान रहते हैं, जो बिना बोये-बखरे ही समय पर पक जाते हैं और प्रजा को पुण्य की तरह महाफल प्रदान करते हैं।

यत्रोद्यानेषु पाल्यन्ते पयोदैर्बलिपादपाः।
स्तनन्धया इवाप्राप्तस्थेमानो यत्नरक्षिताः॥ ११६॥

—उस नगरी के उपवनों में अनेक छोटे-छोटे पौधे ऐसे हैं, जिन्हें अभी पूरी स्थिरता-दृढ़ता प्राप्त नहीं हुई है। लोग उनकी सावधानीपूर्वक रक्षा करते हैं तथा बालकों की भाँति उन्हें पय-जल पिलाते हैं, सिंचन करते हैं।

पद्मेष्वेव विकोशत्वं प्रमदास्वेव भीरुतां।
दन्तच्छदेष्वधरता यत्र निस्त्रिंशता सिषु॥ ११८॥
याञ्चाकरग्रहौ पत्न्यां विवाहेष्वेव केवलम्।
मालास्वेव परिम्लानिर्द्विरदेष्वेव बंधनम्॥ ११९॥

—उस नगरी में विकोशत्व (खिल जाने पर बौड़ी का अभाव) कमलों में ही होता है, मनुष्यों में विकोशत्व (खजाने का अभाव) नहीं होता। अधरता केवल ओठों में ही है, लोगों में अधरता (नीचता) नहीं है। निस्त्रिंशता-खड्गपना तलवारों में ही है, मनुष्यों में निस्त्रिंशता (क्रूरता) नहीं है। याञ्चा—वधू की याचना करना और करग्रहण (पाणिग्रहण) विवाह में ही होता है, वहाँ के मनुष्यों में याञ्चा (भिक्षा माँगना) और करग्रह (कर वसूल करना) अथवा अपराध होने पर जंजीर आदि से हाथ-पैरों का बाँधा जाना नहीं होता। म्लानता पुष्पमालाओं में ही है, मनुष्यों में म्लानता (उदासीनता या निष्प्रभता) नहीं है और बंधन-रस्सी आदि से बाँधा जाना केवल हाथियों के लिए ही है, मनुष्यों के लिए कारागार आदि का बंधन नहीं है। ('महापुराण', चतुर्थ पर्व)

काव्यात्मक वर्णन में, प्रथानुसार अतिशयोक्ति का होना स्वाभाविक होने पर भी, इतना तो माना ही जा सकता है कि रचयिता के मानस पर मानवीय मूल्यों का प्रभाव अमिट है। नगरी का खेतों, वाटिकाओं, वापिकाओं, उपवनों से परिपूर्ण होना, लोगों का उद्योगी, साहसी, निर्भय होना और नीचता, कारागार, अपराध आदि का अभाव—ये सारी स्थापनाएँ सत्ययुगीन प्रतीत होने पर भी इसी धरती पर और आज से लगभग बारह सौ वर्ष पूर्व की गयी हैं। वाल्तेयर जैसे पश्चिमी साहित्यकार ने भी अपने उपन्यास में 'सुवर्णपुरी' जैसी नगरी का वर्णन किया है।

लोकतंत्र का वास्तविक अर्थ

(नेमिशरण मित्तल)

वस्तुतः लोकतंत्र में दंड-आधारित शासन के लिए कोई स्थान ही नहीं रहता। लोकतंत्र की दृष्टि में मनुष्य एक विचारवान् और विवेक-परायण प्राणी है। अतः उसे पशुओं की भाँति डंडे से नहीं हाँका जा सकता। लोकतंत्र विचार-विनिमय, हृदय-परिवर्तन एवं बौद्धिक सहयोग पर आधारित है। उसमें व्यक्ति का चरम महत्व है। व्यक्ति को अधिकार है कि वह अपने विचारों में स्वतंत्र रह सके तथा उसे कोई विचार मानने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। समझाया जा सकता है, धमकाया नहीं जा सकता। इसमें राज्य-हिंसा और "लोकहिंसा", दोनों के लिए कोई स्थान नहीं होता। लोकतंत्र का साध्य अहिंसा के साधन से ही प्राप्त हो सकता है, जिसका प्रमुख अस्त्र हृदय-परिवर्तन के लिए विचार-विनिमय अर्थात् बौद्धिक निकटता एवं सत्याग्रह के मार्ग का अवलम्बन किया जा सकता है। सत्याग्रह में प्रतिकार या दबाव डालने के तरीकों का समावेश नहीं होता, उसमें केवल सत्य का आचरण, सहनशीलता, बुराई के साथ असहयोग तथा बुराई के कर्ता के साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार आदि अहिंसक मार्गों को ही गिना जा सकता है।

लोकतंत्र की एक मौलिक धारणा है कि समाज के भीतर मनुष्यों के बीच "अविरोधेन जीवन" की कल्पना मूर्तिमान होनी चाहिए। अविरोधेन जीवन का अर्थ है—"स्पर्धारहित जीवन" अथवा "सहयोगी जीवन"। समाज के व्यक्तियों में हित-संघर्ष नहीं होना चाहिए। दूसरे शब्दों में इसे ही शोषणहीन समाज कहेंगे। लोकतंत्र एक शासनहीन, शोषणहीन समाज की कल्पना है। उसमें अल्पमत और बहुमत का प्रश्न ही नहीं उठता। वह तो लोकोदय या सर्वोदय का मंत्र है, जिसके द्वारा विश्व-समाज के समस्त मानव अपने पशु-पक्षी, साथियों-सहित एक सर्वांग-संपूर्ण और अविरोधी जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

लोकतंत्र को अधिकतम लोगों के अधिकतम हितवाले उपयोगितावादी सिद्धान्त के साथ जोड़ना असंगत है। लोकतंत्र बहुतंत्र नहीं, सर्वतंत्र है और उसमें किसी भी व्यक्ति या समूह के हितों की उपेक्षा का कोई स्थान नहीं है। आज जो बहु-संख्या और अल्प-संख्या के प्रश्न उठे हैं, वे सभी लोकतंत्र की सिद्धि के लिए अयोग्य साधनों के चुनाव के कारण पैदा हुए हैं। वस्तुतः दंडसत्ता द्वारा लोकहित के सम्पादन का विचार ही अमानवीय है। लोकहित के सम्पादन का एक ही मार्ग है कि समाज में संगठित मानव स्वयं सक्रिय हों और अपने सम्यक् हितों का सहयोगपूर्वक सम्पादन करें। लोकतंत्र को केवल एक राजनीतिक-प्रत्यय (पॉलिटिकल कॉन्सेप्ट) मानना गलत है। वह मनुष्य के सम्पूर्ण सामाजिक जीवन की एक योजना है, जिसमें मनुष्य को मनुष्य के साथ व्यावहारिक रूप में समानता प्राप्त होती है। मानव-समाज एक विश्व-परिवार "वसुधैव कुटुम्बकम्" का स्वरूप ले, यही लोकतंत्र का लक्ष्य है, जिसमें मनुष्य अपने समाज के भीतर प्रेम के आधार पर जीवनयापन करे और जहाँ मानवीय मूल्यों की स्थापना हो। लोकतंत्र मानव को समस्त मूल्यों का मापदण्ड मानता है। इसका अर्थ यह है कि मानव के लिए उपयोगिता ही किसी वस्तु का मूल्य है, स्वयं मानव का मूल्य किसी वस्तु या मुद्रा के माप में नहीं आँका जा सकता। प्रत्येक मानव अपनी मानवता के नाते प्रतिष्ठित है। उसकी प्रतिष्ठा का आधार धर्म, वर्ण, जाति, राष्ट्रीयता, सम्पत्ति या सुविधा में से कुछ भी नहीं हो सकता।

लोकतंत्र को राष्ट्रीयता के साथ जोड़ना गलत तो है ही, खतरनाक भी है। लोकतंत्र एक व्यापक विश्वविचार है। लोकतंत्र कभी यह नहीं सिखाता कि अमुक राष्ट्र के नागरिकों से ही मित्रता, समता और स्नेह का व्यवहार रखना चाहिए तथा दूसरे राष्ट्रों के साथ कटुता बरतनी चाहिए। लोकतंत्र तो मानव की प्रतिष्ठा और निष्ठा का दर्शन है, फिर वह मानव ब्रह्मांड के किसी भी कोने में बसा हो। यह एक आस्तिक और नैतिक विचार है। अधिक कहें, तो लोकतंत्र एक विशुद्ध धर्म-विचार है। यह संसार में समानता तथा एकसूत्रता अर्थात् एक जीवन की व्याप्ति का शास्त्र है। यह एक असम्भव कल्पना है कि दो व्यक्ति या दो राष्ट्र, जो लोकतंत्र में निष्ठा रखते हों, आपस में कभी भी कलह-विग्रह या युद्ध कर सकें। लोकतंत्र अर्थात् प्रेमतंत्र। लोकतंत्र अर्थात् "अहं ब्रह्मास्मि, तत्त्वमसि" की निष्ठा।

आज आचार्य विनोबा जैसे संत जिस समाज की रचना का स्वप्न देखते हैं, उसके बीज इस वर्णन में भी हैं। राजर्षि टंडनजी के वाटिका-गृह की कल्पना भी इसमें सुरक्षित हैं।

---

www.vinoba.in

'नारायण' का सादा शब्द : 'सर्वोदय'

विनोबा

नारायण का अर्थ है—नरसमूह का देवता। जो मनुष्य के हृदय में रहता है, समाज के हृदय में रहता है, वह 'नारायण' है। वह समूह का देवता है। सारे समाज को ही 'नारायण' नाम दिया जाता है। हर व्यक्ति के हृदय में जो अंतर्यामी है, वही सारे समूह में भरा हुआ है। वही नारायण है।

भक्तों को सिखाया गया है कि अपनी सारी शक्ति, सारी संपत्ति नारायण को समर्पित करनी चाहिए। भक्त हमेशा बोलता है, "नारायणेति समर्पयामि।"—सब कुछ मैं नारायण को समर्पण करता हूँ। कहाँ है वह नारायण? यह समाज जो सामने बैठा है, वही नारायण की मूर्ति है। हमारी सारी सेवा, सारी संपत्ति, शक्ति, सारी बुद्धि उसीको समर्पित होनी चाहिए।

आज तो हमने नारायण के टुकड़े-टुकड़े कर दिये हैं। नारायण को काटा है। अपना परिवार एक हिस्सा, दूसरे का परिवार दूसरा हिस्सा, तीसरे का परिवार तीसरा हिस्सा! इस तरह हमने बना रखा है। नारायण के टुकड़े करके उसके एक टुकड़े की हम सेवा करते हैं, तो उससे वह प्रसन्न नहीं होता है। उससे समाज में विरोध होता है। हमारे देश का दूसरे देश से विरोध होता है। इस तरह द्वेष और झगड़े चलते हैं। इससे नारायण प्रसन्न नहीं होते हैं। इसलिए कवि ने कहा कि सबका भला और सबमें मेरा भला होगा। हमने उसी 'नारायण' शब्द का सादा शब्द बनाया—"सर्वोदयम्।" सबका भला और सबमें मेरा भला। श्रद्धा से भरी हुई नदी अपना कुल पानी लेकर समुद्र की ओर दौड़ती है और समुद्र में डूबती है। कावेरी वैसा करती है, गंगा नदी भी वैसा ही करती हैं। अपना कुल पानी लेकर समुद्र में डूब जाती हैं। छोटा नाला भी वैसा ही करता है। किसी मनुष्य के पास शक्ति ज्यादा होती है, तो किसीके पास कम। किसीके पास बुद्धि-संपत्ति अधिक रहती है, तो किसीके पास कम। तो, अपने पास जो कुछ जितना है, वह सारा का सारा सबकी भलाई के लिए, सर्वोदय के लिए समाज को समर्पण करो।

(अमन्तुर, रामनाड़, ३१-३-५७)

—

सत्य + प्रेम = भूक्रांति

जिस प्रकार हाइड्रोजन और ऑक्सीजन के संमिश्रण से पानी बनता है, उसी प्रकार सत्य और प्रेम के सम्मिलन का फलितार्थ है—भूक्रांति। सत्य का अर्थ है, स्वामित्व-विसर्जन की भावना। किसी भी वस्तु पर व्यक्ति का स्वामित्व पाप और अधर्म है, क्योंकि उसका सृजन सामाजिक प्रेरणा और सहयोग से होता है। फलतः व्यक्तिगत स्वामित्व का विचार ही अनीतिपूर्ण है; अतः असत्य है। जो विचार असत्य है, नीति-संगत नहीं है, वह त्याज्य है। इस प्रकार भूमि पर व्यक्तिगत स्वामित्व अधर्म है, केवल "सबै भूमि गोपाल की" ही सत्य है।

किन्तु आज भूमि पर व्यक्तिगत स्वामित्व मौजूद है। इसे विचारपूर्वक छोड़ना प्रेम-मार्ग है। यह क्रांति की अहिंसक साधना है। स्वामित्व का विसर्जन कानून और जोर-जबर्दस्ती से भी हो सकता है। लेकिन इससे वस्तु तो छिन जाती है, परन्तु वस्तु के प्रति जो आसक्ति होती है, वह बराबर बनी रहती है। जहाँ आसक्ति है, वहाँ विशुद्ध प्रेम नहीं है, मोह है। जहाँ वस्तु पर आसक्ति होती है, अधिकार की लालसा बनी रहती है और उसके छिन जाने पर प्रतिशोध की भावना जाग्रत होती है। प्रतिशोध की उत्तर परिणति प्रतिहिंसा में होती है, जहाँ प्रतिहिंसा है; वहाँ द्वेष और दुर्भावना बनी रहती है। अतः वहाँ प्रेम के मूल्य की निष्पत्ति नहीं हो सकती। परन्तु व्यक्तिगत मिल्कियत अनीतियुक्त है। किसी भी वस्तु के सृजन और उत्पादन में सारे समाज का सहयोग होता है, इसलिए इस पर अधिकार भी समाज का ही है। मैं तो जो कुछ मेरे पास है, उसका 'ट्रस्टी' मात्र हूँ, इसका उपयोग करने का अधिकार तो सारे समाज का है, ऐसा उदात्त विचार स्वीकार करना और स्वामित्व को विचारपूर्वक समाज के चरणों पर समर्पण कर देना ही सच्चा प्रेम है।

इस प्रकार जिस करुण हृदय में सत्य और प्रेम की अंतःसलिलाओं का संगम होता है, वहाँ व्यक्तिगत स्वामित्व का कलुष स्वयं क्षय हो जाता है और वह मानव-मन प्रयागराज हो उठता है। ऐसे ही मानव-मन के संगम-स्थल से भूक्रांति की पावन गंगा का अवतरण हुआ है, जिसकी प्रत्येक धारा ईशोपनिषद के इस श्लोक से अभिमंत्रित है :

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥

—त्रिलोकचन्द

—

विचार-क्रांति द्वारा स्वामित्व की समाप्ति

(बद्रीप्रसाद स्वामी)

जिस प्रकार भूमि पर व्यक्ति का स्वामित्व समाप्त कर गाँव-समाज के स्वामित्व के रूप में भगवान् का स्वामित्व कायम करना भूदान का लक्ष्य है, उसी प्रकार संपत्तिदान में सारी संपत्ति पर समाज का स्वामित्व कायम करने का लक्ष्य निहित है। संपत्तिवानों ने अपनी संपत्ति का अपना स्वामित्व भ्रमवश बना रखा है। उसे शीघ्र छोड़ देने में ही उनका हित है। ऐसा करने पर समाज में वे समरस होकर समाज का सम्मान ही नहीं पायेंगे, बल्कि उस संपत्ति की रक्षा और संग्रह के लिए किये जाने वाले नित्यप्रति के अनैतिक व अमानुषिक कार्यों से वे बच सकेंगे। वे सभी तरह से मुक्त होकर अपने जीवन का सही आनंद उठा सकेंगे। सभी चिन्ताओं से मुक्त हो सकेंगे।

संपत्ति-संग्रह करने के तीन प्रमुख कारण हैं : (१) आय की अनिश्चितता, (२) बुढ़ापे की व्यवस्था एवं (३) संतान के लिए संग्रह। जहाँ तक अनिश्चितता का सवाल है, यह चिन्ता उन लोगों को कतई नहीं है, जो उत्पादन-श्रम में लगे हुए हैं। परन्तु जो अनुत्पादक तरीकों से अपनी आय प्राप्त करते हैं, उनके लिए अवश्य चिंता का विषय है। ऐसे व्यक्तियों को शीघ्र ही उत्पादन-श्रम में लग जाना चाहिए, ताकि संग्रह की बीमारी से भी वे बच सकें और आय की अनिश्चितता भी दूर हो सके। उत्पादक-वर्ग उत्पादन करते हुए भी आज दुःखी है, पर उसके दुःख का कारण अनुत्पादक-वर्ग ही है, जो बैठे खाना चाहता है और संग्रह भी करना चाहता है। इसलिए हो सकता है कि इस समय उस तरफ आकर्षण न हो, पर अनुत्पादक-वर्ग उत्पादक-वर्ग के श्रम पर ही तो जीवित है, उसके श्रम की चतुराईपूर्ण चोरी करके ही तो वह संग्रह कर पाता है।

अतः यहाँ रोजमर्रा चल रही भयंकर सामाजिक चोरी से मुक्त होने में ही संपत्तिवानों का कल्याण है। आज तक दुनिया में संपत्तिवानों को मार देने या कानून की जोर-जबर्दस्ती से उनकी संपत्ति छीन लेने पर भी लोगों के दिलों से व्यक्तिगत मालकियत की भावना नहीं मिट पायी। अब विश्व के सामने अपने देश में इस संपत्तिदान-यज्ञ के द्वारा यह एक तीसरा अनोखा प्रयोग हो रहा है, जिसके द्वारा हर व्यक्ति बिना किसी जोर-जबर्दस्ती, दबाव या स्वेच्छा से अपनी व्यक्तिगत मालकियत समाप्त कर सकेगा और सारी संपदा पर समाज की मालकियत मंजूर कर लेगा। इतिहास में आज तक ऐसा नहीं हुआ, इसलिए लोगों को यह असंभव मालूम होता है; परन्तु अगर हम प्रकृति के साथ जीवन के संबंध को गहराई से समझें, तो यह सबसे सरल और स्थायी तरीका मालूम होगा।

भावना बदलने के लिए न बढ़िया से बढ़िया हथियार काम दे सकता है और न अच्छे से अच्छा कानून। उसके लिए तो विचार-क्रांति ही एकमात्र तरीका है, जिसकी सफलता उन व्यक्तियों पर ही निर्भर है, जो इन विचारों को अपने जीवन में पहले उतार लें। ऐसे व्यक्तियों के शुद्ध जीवन की ज्योति स्वतः लोगों के विचारों को पलट देगी।

—

रुकना मेरा काम नहीं

लड़ता प्रतिपल तूफानों से, मुड़ने का है अरमान नहीं,
रोको न पथिक मुझको मग में, है रुकना मेरा काम नहीं।
इस युग-सागर की धारा पर, जीवन-नौका बहती जाती,
क्या तुम्हें पता इसका न अभी लहरें गिर उठ क्या बतलातीं?
पथ पड़ा सामने है अनन्त, जिसके इति का है ज्ञान नहीं।
मैं दृढ़व्रती हो निकल पड़ा, जो रुकता वह इन्सान नहीं।
जिनमें है जोश जवानी का, वे ही काँटों में बढ़ते हैं।
जो अपनी धुन के पक्के हैं, वे ही पर्वत पर चढ़ते हैं।
जीवन गतिमान सदा रहता, गति अगर नहीं तो जीवन क्या?
यौवन टकराता पर्वत से, टकरा न सके तो यौवन क्या?
मुझमें जीवन है, यौवन है, पग में रुकने का ध्यान नहीं।
रोको न पथिक मुझको मग में, है रुकना मेरा काम नहीं।

—श्री रामेश्वर मिश्र

—

www.vinoba.in

नागोर जिले की भूदान-पदयात्रा

(बद्रीप्रसाद स्वामी)

२६ जनवरी '५७ को मैंने साथी भाई मोहनलाल सहित जिले की सभी तहसीलों में से होते हुए पदयात्रा का निश्चय किया। इधर कड़ी सर्दी और उधर चुनाव! २६ जनवरी के गणतंत्र-दिवस पर मकराना नगर के नागरिकों व विद्यार्थियों ने हमको यात्रा के लिए विदा किया। हमने अपने साथ उतना ही सामान लिया, जितना हम खुद उठा कर ले जा सकते थे। वैद्य श्री रघुनाथजी, श्री शिवकरण और मूलचंद चौधरी आदि भी यात्रा में समय-समय पर सम्मिलित हो गये थे।

मोलासर में सैकड़ों की तादाद में भूमिहीन लोग पाये गये तथा श्रमिकों को कम-से-कम वेतन देकर अधिक-से-अधिक काम लेने की स्थिति भी देखी। इन गाँवों में ग्राम-विकास के तीन मुख्य काम देखे गये। पेड़ों के गड्ढे, खाद के गड्ढे और रास्ते चौड़े। लोगों का गड्ढों के बारे में तो यह कहना था कि हमारे तो रहने को मकान भी नहीं, ये गड्ढे हमारे किस काम के? खाद के गड्ढे भी लोगों को भार-रूप मालूम हो रहे हैं। गड्ढों में खाद डालने की अब भी कोई आदत नहीं पड़ी है। हर गाँव में घुसते ही कचरे का ढेर रास्ते पर ही मिलता है। श्रमदान द्वारा रास्ते चौड़े करने में भी लोगों ने एक तरह की 'बेगार' समझ करके ही किया।

डीडवाणा तहसील के बाद हम नागोर व जायल तहसील के गाँवों से गुजरे। यहाँ भूमि-समस्या बहुत कम है। गाँव वैसे एकफसला हैं। जमीन काफी है। लोग पाँच-पाँच वर्ष तक जमीन परती रखते हैं। सावणू उराज अच्छी होती है। बैल और भेड़ों के पालन के कारण लोगों की आर्थिक स्थिति बहुत ही अच्छी है। इधर अधिकतर लोगों के पक्के मकान हैं। पैसा अधिकतर मुकद्दमेबाजी और 'मौसर' में खर्च किया जा रहा है! इधर बड़े, ऊँचे खेजड़े पर बैलगाड़ी का पहिया चढ़ा कर मौसर करने का बड़ा रिवाज है। एक जगह हमें बताया गया कि जितनी लंबी खेजड़ी होगी, उतनी ही उसकी विशेष कीमत होगी। अज्ञानता की भी हद है। आलस और अज्ञानता इन गाँवों में काफी है। शहर की देखा-देखी-गाँव के लोग भी मेहनत से जी चुराने लगे हैं। गुड़ की जगह शक्कर और दूध की जगह चाय का प्रयोग अत्यधिक करना शुरू कर दिया है। साक्षरता और स्वच्छता का बड़ा अभाव है। स्कूल कई जगह खुल गये हैं, परन्तु आज की शिक्षा-पद्धति उचित न होने से लोगों को कोई दिलचस्पी नहीं है। इन गाँवों के लोगों ने ग्रामदान के विचार को बहुत पसंद किया। भूमि-समस्या कम होते हुए भी भूमि की मालकियत गहरा घर कर गयी है। किसान तो जागीरदारों की ही नकल करने लग गये हैं।

नागोर-जायल तहसील के बाद मेड़ता और डेगाना तहसील में प्रवेश किया। ये तहसीलें दोफसला हैं। यहाँ बिना सिंचाई के काफी जौ-चना होता है। यहाँ भी विशेष भूमि-समस्या नहीं है। लांबाजाटाँ में कई भूमिहीनों को जमीन देने के बाद काफी जमीन गोचर में डाली गयी। फिर लोगों ने आवाज दी कि "हमारे गाँव में अब कोई भूमिहीन नहीं रहा।" ऐसी आवाज इस यात्रा में कई गाँवों में लगायी गयी। रेण गाँव में इससे विपरीत स्थिति पायी गयी। सभा में पूछा गया कि 'यहाँ कितने भूमिहीन हैं', तो सैकड़ों लोगों ने हाथ ऊँचे किये। यहाँ के जागीरदार ने हजारों बीघा जमीन अपने कब्जे कर रखी है। यहाँ काफी भूमिहीन हैं। यहाँ पर सभा समाप्त होने तक किसीने भूदान में जमीन नहीं दी, परन्तु अंत में एक सज्जन पुरुष निकल ही आया, जिसने २० बीघा भूदान देकर गाँव की लाज रखी। गाँव पालड़ीजोधा में भी किसीके भूमि न देने पर एक ब्राह्मण ने अपनी कुल भूमि, करीब ३ बीघा भूदान में दे डाली। लोगों ने मना किया कि 'तेरे पास थोड़ी जमीन है, तू क्यों देता है', तो उसने कहा कि मुझसे पिछड़े हुए भी कई भाई हैं। ब्राह्मण से प्रेरणा पाकर दूसरे भाई ने भी ८ बीघा भूमि दान दी। मेड़ता तहसील में पंच व पटवारियों का अच्छा सहयोग रहा।

इस सारी यात्रा में १ महीना और ११ दिन लगे। ६८ गाँवों में मुकाम किया गया। छोटी-बड़ी १०० सभाओं द्वारा सारे जिले भर के करीब १ लाख नर-नारी तथा विद्यार्थियों को भूदान का संदेश दिया गया। यात्रा के दौरान में कहीं-कहीं दिन में दो-दो गाँवों में भी मुकाम रखा गया। कुल मिला कर ३५० मील की यात्रा हुई। यात्रा में ११२ दानपत्रों द्वारा २०३३ बीघा भूमि मिली, जिसमें से १९८७ बीघा ९९ आदाताओं में वितरित की गयी। १५० कार्यकर्ता तथा विद्यार्थियों ने समयदान भी दिया। यात्रा में अन्य १०० सहयोगी पदयात्रियों ने बीच-बीच में साथ दिया। २५२) की साहित्य-बिक्री हुई। ४९ ग्राहक बने।

ग्रामदान की तैयारी में अनेक गाँव होते हुए भी हमने खास तौर पर गाँवों की भूमिहीनता मिटाने की दृष्टि से सभा में जो जमीन प्राप्त होती उतनी ही लेकर गाँव की सम्मति द्वारा वितरित कर देते। तुरंत वितरण करने में कोई बाधा नहीं आयी, बल्कि गाँव में उत्साहवर्द्धक वातावरण बना। लोगों को यह विश्वास हो गया कि भूमि अवश्य बँट कर रहेगी। पूरी यात्रा में पंच, पटवारी, मास्टर और जनता का पूरा-पूरा सहयोग रहा। पार्टियों के कार्यकर्ता तो करीब सभी चुनाव-दंगल में लगे हुए थे। यात्रा का दूसरा अनोखा अनुभव यह आया कि चुनाव-पार्टीवाले इस बार कहीं कोई सभा नहीं कर रहे थे और न जनता उनको सभा करने ही दे रही थी। सारा चुनाव-प्रचार जाति-जाति के मुखियों के आधार पर चल रहा था। आम जनता के दिल में चुनाव के लिए कोई दिलचस्पी नहीं थी, बल्कि असंतोष और निराशा थी। अधिकतर लोग वोट देने के लिए जबर्दस्ती लाये जा रहे थे। लोगों को अपनी समस्याएँ अपने आप सुलझाने का कतई ज्ञान नहीं है। इसीलिए राम से बढ़कर राज को मानते हैं। एक बड़ा अनुभव यह आया कि ज्यों-ज्यों राज्यनिष्ठा लोगों में गहरी होती जा रही है, लोग अत्यधिक नास्तिक भी होते जा रहे हैं। ईश्वरभक्ति का आडंबर मात्र रह गया है। यात्रा में भाई मोहनलाल ने अपने अनेक भूदान-गीत सुना कर बच्चे-बच्चे की जबान पर "५७ की यही पुकार : धरती बाँटो पाओ प्यार" का जयघोष गुँजाया। यात्रा विपरीत परिस्थितियों के बावजूद अत्यधिक सफल हुई।

नैतिक आंदोलन के साधन

[देश के भिन्न-भिन्न प्रदेशों में भूदान-आन्दोलन का काम करने वाले कुछ भाई-बहन यह महसूस कर रहे थे कि कहीं शांति से एकसाथ बैठ कर अपने दिल की बातें खुल कर की जायँ एवं आन्दोलन तथा जीवन के संबन्ध में उठने वाले प्रश्नों व समस्याओं पर निःसंकोच चर्चाएँ हों तथा आपसी मैत्री व घनिष्टता बढ़े। श्री गोराजी ने इस उद्देश्य से कुछ मित्रों को सर्वोदय-आश्रम, सोखोदेवरा में जनवरी के प्रारंभ में बुलाया। वहाँ जो चर्चाएँ हुईं और उससे जो निष्कर्ष निकले, उसमें से एक की ओर यहाँ सबका ध्यान खींचना आवश्यक महसूस होता है। -कृष्णराज]

हमें इस बात की छानबीन करनी चाहिए कि राजनैतिक आन्दोलन में और नैतिक आन्दोलन के साधनों में क्या अन्तर है। यह जाहिर है कि राजनैतिक आन्दोलन संख्या से विशेष संबंध रखता है, नैतिक आन्दोलन हृदय-परिवर्तन से। इसलिए इस आन्दोलन के साधनों को अधिक हृदय से हृदय जोड़ने वाला बनाना होगा। मसलन् हमारे आन्दोलन में नारों का स्थान कम है, ऐसा महसूस किया गया है और साम्प्रदायिक गंध न रखने वाली भजन-मण्डलियाँ, जुलूसों का स्थान ले सकती हैं। सार्वजनिक सभा, भित्तिपत्र आदि कुछ साधन तो ऐसे हैं, जो दोनों प्रकार के आन्दोलन में साधारण हैं।

भूदान जहाँ एक ओर से सामाजिक क्रांति का साधन है, वहाँ दूसरी ओर से वह भूदान-सेवक के लिए साधना का विषय भी बनना चाहिए। भूदान के सेवक को नित्यप्रति अपने नैतिक विकास के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। भूदान-सेवकों का नैतिक विकास एक-दूसरे के आपसी संबंध में प्रगट होता है। कार्यकर्ताओं में आपसी मेल बढ़ता रहे, इसके लिए सभी भूदान-सेवकों को सजग रहना चाहिए। उसके ध्यान में हमेशा यह भी रहना चाहिए कि स्वयं अपने जीवन से अहिंसक क्रांति की प्रक्रिया में मदद कर रहा है। अपने साथी के बारे में उसे गहरी श्रद्धा होनी चाहिए। इस साधना में निम्न आदतों से कुछ मदद मिल सकती है :

(१) भूदान-सेवक नियमित रूप से आत्म-निरीक्षण करें। दिन के अंत में वे स्वस्थ होकर सारे दिन के काम के बारे में ध्यान करें और अपनी त्रुटियों का मार्जन करने का प्रयत्न करें। इसके लिए डायरी-लेखन भी उपयोगी हो सकता है। लेकिन वह तंत्रवत् नहीं लिखी जानी चाहिए। (२) अनिन्दा-व्रत। एक-दूसरे की पीठ-पीछे बुराई करने की अपेक्षा, आमने-सामने बैठ कर साफ-साफ बातें कर लेना अच्छा है। (३) नियमित अध्ययन और चिंतन। व्यक्तिगत विकास की दृष्टि से अधिक पढ़ने के बनिस्बत उत्तम ग्रंथों का बार-बार पढ़ना अधिक उपयोगी हो सकता है। (४) सत्संगति। सेवक आने से ऊँचे नैतिक स्तरवाले लोगों के सहवास में रहनेके मौके ढूँढ़ लें। (५) पदयात्रा स्वयम् एक ऐसा साधन है, जो नैतिक विकास में सहायक हो सकता है। (६) हमारे काम में कमी-कमी जो बाहरी निष्फलता मिलती है, उससे भी निष्कामता बढ़ाने में मदद मिल सकती है। (७) जीवन में गुप्तता न रखना। (८) साथी की व्यक्तिगत सेवा करना। (९) हँसने और हँसाने की आदत रखना।

---

www.vinoba.in

भूदान-आंदोलन के बढ़ते चरण

लोक-सेवकों से प्राप्त विवरण : १५ मार्च '५७ तक

मध्यप्रदेश :

श्री जसवंतराय,नरसिंहपुर : डांगीढाना क्षेत्र की पदयात्रा की। बीच-बीच में श्री ज्वालाप्रसाद कृषक ने सहयोग दिया। ४९ दाताओं द्वारा १६५ एकड़ जमीन प्राप्त हुई और १४७ आदाताओं में ७७० एकड़ भूमि का वितरण किया गया। पद-यात्रा ३० जनवरी से १० मार्च तक चली। ६१) की साहित्य-बिक्री हुई। ११ ग्राहक बने।

श्री ठाकुर विजय सिंह, सागर : बंडा तहसील में २५ अप्रैल को होने वाले शिविर की तैयारी कर रहे हैं। श्री तुलसीराम यादव तथा प्रभुदयाल गुप्ता पूरा समय देने को तैयार हो गये हैं। और भी १० कार्यकर्ता पूर्ण समयदानी मिले हैं। श्री राजे खाँ (लोकसेवक) का साथ है। साहित्य-बिक्री ३२५) की हुई।

श्री लक्ष्मीनारायण जैन, दमोह : दमोह के प्रमुख कार्यकर्ताओंकी सभा की गयी। फिलहाल शहर में भूदान, साहित्य-बिक्री एवं प्रचार शुरू है।

श्री रामानंद दुबे, रायपुर : फरवरी के मध्य तक सूतांजलि का कार्य किया। श्री महावीर प्रसाद श्रीवास्तवजी ने ग्राहक बनाये और ८३) की साहित्य-बिक्री की।

श्री शालिकराम शुक्ला (निवेदक), **रायपुर** ने महासमुंद तहसील में संपत्तिदान का दौरा किया। साथ में श्री शालिकराम बिसेन भी थे। ६००) वार्षिक के संपत्ति-दान-पत्र प्राप्त हुए। १९ गाँवों के ५६ परिवारों में २६ एकड़ भूमि वितरित की।

श्री वंशीलाल पटेल, बह्मनी-बंजर, मंडला : वितरण-यात्रा करके २५० एकड़ जमीन का बँटवारा किया। ३० एकड़ का नया भूदान भी मिला। साहित्य-बिक्री हुई।

श्री महिपालसिंह नाकतोड़े, बालाघाट : चाँगेटोला में १२ से २१ फरवरी तक शिविर चलाया गया। खर्च स्थानीय दाताओं ने दिया। ८ टोलियों ने १६० मील की यात्रा की। फलस्वरूप २५ दाताओं द्वारा ४८ एकड़ भूदान मिला। १२६) की साहित्य-बिक्री हुई। २ समयदानी मिले, २२ ग्राहक बने। संपत्तिदान, साधनदान तथा अन्नदान के एक-एक दान-पत्र प्राप्त हुए।

श्री शंकरलाल मंडलोई, पालिया, इंदौर : इंदौर और देवास जिले में प्रचार-यात्रा की। ५० बीघा भूदान और १२०) वार्षिक का संपत्तिदान मिला। ५० ग्राहक बने और १००) की साहित्य-बिक्री हुई।

श्री पंथराम, भटंग, दुर्ग : पदयात्रा में ६२ एकड़ भूदान मिला और ४० एकड़ का वितरण किया गया। श्री ईश्वरदासजी, वालोद को पदयात्रा में ६४ एकड़ भूदान मिला और ९७ एकड़ का वितरण किया गया। श्री उम्मेदसिंहजी, वड़ेमारा को पदयात्रा में १११ एकड़ भूदान मिला और ५६३ एकड़ का वितरण हुआ।

श्री ठाकुर रामप्रसादजी, जबलपुर : जिले में भूमि-वितरण की पूर्व-तैयारी की तथा शहर में संपत्तिदाताओं से संपर्क स्थापित किया।

श्री गं० उ० पाटणकर, बैतूल : श्री पवार गुरुजी तथा श्री गोहाड़ के साथ मुलताई और मोर्शी तहसील में शिविर का आयोजन किया।

उत्तर-प्रदेश :

श्री लक्ष्मीनारायण जैन, बाराबंकी : कटैयाहार में शिविर लेकर ५ टोलियों ने ५३४ मील की सामूहिक पदयात्रा द्वारा ३२८ गाँवों में भू-क्रांति का संदेश पहुँचाया। ६ एकड़ भूमि-प्राप्ति, ७) अन्न-दान मिला। ८४) की साहित्य-बिक्री हुई, ११ ग्राहक बने। एक भाई ने जीवन-दान दिया और २८ आम के पेड़ दान में प्राप्त हुए।

श्री जयराम भाई, गुदरिया, लखीमपुर : जनवरी माह की यात्रा में ५ वर्ष के लिए एक भाई ने समय-दान दिया।

श्री गया प्रसाद आर्य, भैरवा कलां, फतहपुर : प्रचार-यात्रा में २८ दाताओं द्वारा ६१ एकड़ जमीन प्राप्त हुई। ६६) रु० की साहित्य-बिक्री हुई और ग्राहक बनाये।

श्री हरिश्चंद्र उपाध्याय, श्री रघुराज सिंह, श्री शोभाराम शुक्ल, बहराईच : पद-यात्रा में २८ एकड़ भूदान मिला, २५) की साहित्य-बिक्री हुई और दो ग्राहक बने। ३ एकड़ जमीन का वितरण किया गया। **श्री गोविन्दानन्द, एटा :** प्रचार-यात्रा में ८० एकड़ का वितरण किया और साहित्य-बिक्री की।

श्री शिवनारायण, मथुरा : प्रचार-यात्रा में ग्राहक बनाये। ८४) की साहित्य-बिक्री हुई। **श्री कन्हैयाभाई, बनारस :** ६ ग्राम-सेवक प्राप्त हुए, जो अपने-अपने गाँव की जिम्मेवारी लेकर सक्रिय भाग ले रहे हैं।

१८ अप्रैल को भूक्रांति-दिवस मनायें

बिहार के नेताओं की अपील

बिहार के माननीय नेता सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, कृष्णवल्लभ सहाय, रामदेव ठाकुर, बृजविहारी प्रसाद, अनुग्रह नारायण सिंह, वैद्यनाथप्रसाद चौधरी, ध्वजाप्रसाद साहू,नन्दकुमार सिंह, गौरीशंकरशरण सिंह, लक्ष्मीनारायण (लक्ष्मी बाबू), ब्रजकिशोर प्रसाद साहू, गंगाशरण सिंह आदि ने जनता के नाम अपील की है—

पिछले ५-६ साल जहाँ-जहाँ और जब-जब जनता के पास भूदान का संदेश पहुँचा है, जनता ने इसका स्वागत ही किया है। आज यह आंदोलन ग्रामदान, तालुका-दान प्राप्त करने और ग्रामराज कायम करने तक पहुँच रहा है। अतः हमारा धर्म हो गया है कि हम सब इस पावन आन्दोलन में भाग लेकर अपना हविर्भाग अर्पित कर इसे सफल करें। बिहार के लिए अब भू-क्रांति का कार्य बहुत आसान हो गया है, क्योंकि स्वयं विनोबाजी ने १७ महीने यहाँ रह कर क्रांति का दर्शन करा दिया है। परंतु अभी बहुत कम भूमि बँट पायी है। करीब २० लाख एकड़ भूमि का वितरण अभी बाकी है। अतः सन् '५७ के प्रथम चरण के स्वरूप हमें १८ अप्रैल तक सारी जमीन बाँटने का उपक्रम कर डालना है। बाद के समय में गाँव-गाँव से भूमिहीनता मिटा देने की दृष्टि से कार्य होगा। यह महान कार्य थोड़े से भूदान-कार्यकर्ताओं का ही नहीं है, बल्कि समूचे राष्ट्र का है। हरएक व्यक्ति इस मानवीय क्रांति का कार्यकर्ता है।

बिहार के हरएक नागरिक तथा ग्रामीण से हम यह अपील करते हैं कि सन् सत्तावन के कार्य की पहली किस्त के तौर पर २० लाख एकड़ जमीन का, जो जिलों में मिली है, बँटवारा शीघ्र कर दें। यदि प्रत्येक गाँव के लोग तैयार हो जायँ तो एक ही दिन में सारे प्रांत की भूमि का बँटवारा हो सकता है। फिर भी १८ अप्रैल के एतिहासिक दिन तक बटवारे की अवधि रखी गयी है। सारी जमीन पहले बाँट कर, १८ अप्रैल को भू-क्रांति का समारोह गाँव-गाँव में मनाने का कार्यक्रम चलना चाहिए एवं साल के अगले महीनों में भूमिहीनता मिटाने का संकल्प करना चाहिए। वितरण के कागजात भू-दान-कमिटी से प्राप्त होंगे।

हम कुछ खास लोगों पर विशेष जिम्मेदारी भी डालना चाहते हैं :

(१) भूदाताओं से हमारी अपील है कि वे अपनी जमीन का विवरण शीघ्र देकर नियमानुसार भूमि वितरित करा देने में मदद करें।

(२) ग्राम-पंचायतों तथा ग्राम-मुखियों का पुनीत कर्तव्य है कि वे अपने गाँव में प्राप्त जमीन का वितरण करा दें।

(३) यह काम रचनात्मक संस्थाओं का है, अतः अपने काम को चन्द दिनों के लिए रोक कर भी उन्हें भू-क्रांति को सफल करना चाहिए।

(४) राजनैतिक पक्षों का बहुत सहयोग बिहार में मिला है। आशा है, अब चुनाव के बाद सारे पक्ष अपनी पूरी शक्ति इस कार्य में लगायेंगे।

(५) अपने गाँव के आसपास के २-३ गाँवों की जिम्मेदारी प्रत्येक शिक्षक को लेनी चाहिए और विवरण प्राप्त कर वितरण करना चाहिए।

(६) बिहार के विद्यार्थियों से खास तौर पर यह अपील करना चाहते हैं कि इस कार्य में वे भी अपनी पूरी शक्ति लगावें। हर देश के जीवन में ऐसी घड़ियाँ आती हैं, जब नवयुवकों के बलिदान की आवश्यकता होती है। आज ऐसी ही एक घड़ी हमारे देश के लिए आ पहुँची है। हमें आशा है, इस अवसर पर कोई भी व्यक्ति पीछे नहीं रहेगा।

श्री शंकरप्रसाद मालवीय, मिर्जापुर : प्रचारार्थ ५०० मील की पदयात्रा की, साहित्य-बिक्री हुई और ग्राहक बनाये गये।

श्री चिमनलालजी, आगरा : पदयात्रा में २० बीघा भूदान मिला, ७५) की साहित्य-बिक्री हुई और साधन-दान में ५०) प्राप्त हुए।

श्री रामलाल,गोंडा : पदयात्रा में २९ अन्नदान और ५ बीघा भूदान मिला।

श्री शंकरनाथ गुप्त, हरदोई; श्री नित्यानन्द वैद्य, पीलीभीत; श्री अवधबिहारी, आजमगढ़ आदि लोक-सेवकों ने अपने-अपने क्षेत्र में प्रचार-कार्य किया।

---

www.vinoba.in

बिहार में भू-क्रांति-अभियान की प्रगति

बिहार में भू-क्रांति-अभियान को सफल बनाने के लिए पूरी तैयारी बिहार-वासियों की तरफ से चल रही है। भू-वितरण के शिक्षण और व्यवस्था के लिए चारों सब-डिविजनों में शिविर हुए। उनमें सभी वर्ग के लोग, शिक्षक, विद्यार्थी, रचनात्मक कर्मी, पंचायतों के कार्यकर्ता तथा राजनैतिक पक्षों के लोग, दाता, आदाताओं ने काफी संख्या में भाग लिया और ले रहे हैं। बिहार की सुप्रसिद्ध रचनात्मक संस्था, 'बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ' ने तय किया है कि वह १३ अप्रैल से १८ अप्रैल तक अपना सारा कार्य बन्द कर, सभी कार्यकर्ताओं के साथ पूरी तैयारी सहित बिहार प्रांत में प्राप्त सारी भूमि को वितरित करने में लगेगा। ५००० गाँवों में 'संघ' द्वारा वितरण की योजना है। संघ के इस महान निर्णय से भूदान-कार्यकर्ताओं में उत्साह की लहर फैल गयी है। बिहार की दूसरी संस्थाएँ भी १३ से १८ अप्रैल तक अपना सारा कार्य बन्द कर वितरण-कार्य में लगने का निर्णय कर रही हैं। शिक्षा-विभाग ने एक परिपत्र निकाल कर सभी स्कूलों, कॉलेजों, बुनियादी-विद्यालयों से अपील की है कि १८ अप्रैल के भू-क्रांति-दिवस को सफल बनाने में पूरी मदद करें। काँग्रेस तथा प्रजा-समाजवादी पक्ष के कार्यकर्ता, भारत सेवक-समाज के सेवक आदि वितरण-कार्य में काफी मदद कर रहे हैं।

राँची, फारबिसगंज पटना, आरा और सारन जिलों में से कुल १६९ विद्यार्थियों और ३३८ सामाजिक कार्यकर्ताओं ने वितरण में भाग लेने का निर्णय किया है।

पूर्णियां सदर सबडिविजनल भू-क्रांति-शिविर का उद्घाटन ता० २३ मार्च को श्री दादा धर्माधिकारी ने किया। शिविर में करीब १९० कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ने दूसरे दिन समापवर्तन-समारोह के भाषण में वितरण के नियम और विधि पर प्रकाश डाला। शहर में विशाल प्रचार-सभाओं में भी भाषण हुए। फलस्वरूप ६५ व्यक्तियों ने समय-दान का संकल्प किया। भूमि-वितरणार्थ १०० टोलियाँ रवाना हुईं। जिला-काँग्रेस-कमेटी के अध्यक्ष और प्र० स० पार्टी के प्र० मंत्री ने भी इस क्रांति को सफल करने की घोषणा की।

ता० २२-२३ मार्च को अररिया सबडिविजन के करीब १७५ कार्यकर्ताओं का शिविर फारबिसगंज में हुआ। उद्घाटन-भाषण में श्री दादा ने कहा कि "सर्वोदय-क्रांति विचारों की क्रांति है। बिना विचारों की क्रांति के कोई भी क्रांति समाज के ढाँचे को नहीं बदल सकती।" विभिन्न पक्षों के ७५ शिविरार्थियों ने समयदान दिया।

धनबाद जिले की विभिन्न संस्थाओं के १०० कार्यकर्ताओं, शिक्षकों और ग्राम-सेविकाओं के भूमिवितरण-शिक्षण-शिविर (लोहानावाडी-झरिया) का उद्घाटन ता० २७ मार्च को श्री दामोदरदासजी मूँदड़ा ने किया। उन्होंने भूदान-यज्ञ की व्यूह-रचना से लेकर आज तक के आंदोलन-कार्य का सिंहावलोकन करते हुए भूक्रांति को पर्व के रूप में १८ अप्रैल के दिन मनाने के लिए आवाहन किया। श्री कृष्णराजभाई मेहता ने भी आंदोलन का महत्त्व सरल शब्दों में समझाया। प्रश्नोत्तर और चर्चाएँ हुईं। शाम को सार्वजनिक सभा में ओजपूर्ण भाषण हुए। ता० २८ को श्री रामदेव ठाकुर और श्री शिवराज प्रसादजी ने भूप्राप्ति, भूवितरण-कार्य पर प्रकाश डाला। शिविरार्थियों में से जिम्मेवार कार्यकर्ताओं और ग्राम-सेविकाओं ने वितरण-कार्य का भार उठाया।

दरभंगा जिले के अन्तर्गत मधुबनी शहर में ता. २९ मार्च को मधुबनी सब-डिवीजन के करीब १००० कार्यकर्ताओं के शिविर का उद्घाटन श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा हुआ। दोपहर की बैठक में उन्हींके द्वारा शंका-समाधानार्थ चर्चा हुई। स्थानीय रामकृष्ण कॉलेज में प्राध्यापकों और छात्रों के अपार भीड़ के बीच भी भाषण हुआ। फलस्वरूप ८७ छात्रों ने सन '५७ की भूक्रांति में भाग लेने का संकल्प किया। शाम की आम सभा में प्रेरणादायी भाषण हुआ। दूसरे दिन श्री लक्ष्मीबाबू ने बिहार खादी-ग्रामोद्योग-संघ के कार्यकर्ताओं का ध्यान वर्तमान कर्तव्य की ओर आकृष्ट करके क्रांतिकारी भूदान-आन्दोलन में ग्रामोद्योग महत्त्व पर प्रकाश डाला। छात्रों की सभा हुई। प्रश्नोतर हुए। सबने उत्साह से कार्य पूरा करने का संकल्प किया। शिविर का सारा खर्च जनता ने उठा लिया।

मधेपुरा सबडिविजन के कार्यकर्ताओं का शिविर सहरसा जिलान्तर्गत मधेपुरा में ता० २४-२५ मार्च को; सहरसा सदर सबडिविजन का सहरसा में ता० २६-२७ को और सुपौल सबडिविजन का चौहट्टा ग्राम में ता. २५-२६ को हुआ। हर शिविर में करीब ७५ भूदान-कार्यकर्ताओं ने भाग लेकर १८ अप्रैल तक सारी भूमि वितरित करने का संकल्प किया। शिविर के उद्घाटन-भाषण श्री दादा धर्माधिकारी और दूसरे दिन विदाई-भाषण श्री वैद्यनाथप्रसाद चौधरी द्वारा हुए।

सुपौल सबडिविजन में २०० भूमिहीन परिवारों में ३५० एकड़ भूमि वितरित की।

देवघर सबडिविजन के भूदान और अन्य राजनैतिक दलों के २५० कार्यकर्ताओं का शिविर ३०-३१ मार्च को देवघर में हुआ। श्री दादा धर्माधिकारी ने उद्घाटन-भाषण में भूदान-आंदोलन के सैद्धांतिक दृष्टिकोण को सरल शब्दों में जनता के सामने उपस्थित किया। सदर सबडिविजन के ४९९ गाँवों में १७४३ दाताओं द्वारा प्राप्त ४८६० एकड भूमि का वितरण १८ अप्रैल को करने के संकल्प के साथ कार्यकर्ताओं ने शिविर से बिदाई ली। उपस्थित अन्य व्यक्तियों में से ७ ने लोकसेवक में नाम लिखाये, ६० ने आंशिक समय-दान जाहिर किया, १० भाइयों ने सन् '५७ तक पूरा समय देने का संकल्प किया।

खादीग्राम क्रान्ति-यात्रा की प्रगति

१९५७ में मुँगेर जिले के समस्त गाँवों की पदयात्रा करने के संकल्प से श्रम-भारती, खादीग्राम के आचार्य तथा उनके साथियों का भ्रमण वार्षिकोत्सव के बाद आरम्भ हुआ था। पिछले २५ दिनों में पद-यात्रियों ने १३० मील का भ्रमण किया; १८० गाँवों के लगभग २५ हजार लोगों ने भूदान का संदेश सुना। "भूदान-यज्ञ" के २० ग्राहक बने तथा ३३६) का साहित्य बेचा गया; १५०० छात्रों से सम्पर्क आया; २० गाँवों में ग्रामराज-समितियाँ तथा चार गाँवों में छात्र-संगठन स्थापित करके वहाँ अनवरत भूदान-संदेश पहुँचाने का स्थायी प्रबन्ध किया। मुँगेर के माधोपुर महल्ले में महिला-सर्वोदय-स्वाध्याय-मण्डल की स्थापना की।

दस गाँवों का एक सर्किल बना कर तीनों टोलियाँ सघन काम की दृष्टि से उसी में दो दिन का कार्यक्रम रखती हैं। दिनमें दसों गाँवों की परिक्रमा के बाद रात को तीन गाँवों में ग्राम-गोष्ठी का आयोजन होता है। दूसरे दिन पूरे सर्किल की आम सभा होती है, जिसमें बड़ी संख्या में लोग भाग लेते हैं।

सम्मेलन-सूचनाएँ :

सर्वोदय-प्रेमियों को निमंत्रण

सर्वोदय-विचारधारा में दिलचस्पी तथा विश्वास रखने वाले सभी सर्वोदय-सम्मेलन में निमंत्रित हैं ही। खास परिस्थिति तथा इस साल के सर्व-संग्राहक दृष्टि को ध्यान में रख कर इस समय विशेष रूप से कुछ लोगों को निमंत्रण-पत्र भेजे हैं। लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि कोई बगैर निमंत्रण के सम्मेलन में नहीं आ सकता। यह सम्मेलन एक राष्ट्रीय सम्मेलन ही है। इस सूचना को एक तरह से सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए हर व्यक्ति निमंत्रण ही मान लें।

रेल्वे-कन्सेशन-सर्टिफिकेट प्राप्ति-स्थानों की प्रांतवार सूची और जानकारी पिछले अंकों में छपी है। प्रति व्यक्ति ३) तीन रुपया निवास-शुल्क भेज कर कन्सेशन-सर्टिफिकेट शीघ्र प्राप्त कर सकते हैं। और भी कुछ पते यहाँ दिये जा रहे हैं।

(१) श्री व्यवस्थापक, राजस्थान खादी-संघ, खादी-भंडार, कोटा (राजस्थान)
(२) श्री व्यवस्थापक, खादी-भंडार, अजमेर (राजस्थान)
(३) अ. भा. खादी तथा ग्रामोद्योग-मंडल, पो. बॉ. ४८२, बंबई–१.
(४) श्री संचालक, गांधी-निधि उ० प्र० शाखा, सेवापुरी, जि. बनारस (उ०प्र०)
(५) श्री मंत्री, पंजाब खादी-ग्रामोद्योग-संघ, आदमपुर-दोआबा, जि०जालंधर, पंजाब

—सहमंत्री, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ

उत्तर प्रदेशीय सर्वोदय-सम्मेलन

उत्तर-प्रदेश का सर्वोदय-सम्मेलन झाँसी में २६ से २९ अप्रैल तक होने जा रहा है। उद्घाटन श्री जयप्रकाश नारायण करेंगे। प्रांत के सभी जिला-निवेदक तथा गांधी-स्मारक-निधि के ग्रामसेवक ता० २६ के प्रातः तक वहाँ पहुँच जायँ। श्री बाबा राघवदासजी भी ता० २६ को ही झाँसी पहुँच रहे हैं। समस्त निवेदकों तथा ग्रामसेवकों की जरूरी बैठकें २६ अप्रैल से ही प्रारम्भ होगी। सम्मेलन के अवसर पर खादी-ग्रामोद्योग-प्रदर्शनी का आयोजन भी है। —निवेदक

—श्री शंकररावजी देव का स्वास्थ्य प्रगति पर है। वजन भी बढ़ रहा है। ४ अप्रैलको १३०½ पौंड वजन था। आहार में अन्न लेना अभी शुरू नहीं किया। सर्वोदय-सम्मेलन, काळडी के लिए ४ मई को निकलेंगे। तब तक निसर्गोपचार-आश्रम, उरुळी कांचन (पुणे) रहेंगे।

---

www.vinoba.in

लाइसेन्स नं. ए. ३४ रजिस्टर्ड नंबर ए. ३५४
(पहले से डाक-महसूल दिये बिना भेजने का परवाना प्राप्त)

सर्वोदय की दृष्टि :

केरल की अपूर्व घटना का इंगित

केरल में जो कम्युनिस्ट-सरकार कायम हुई है, वह अपूर्व है। उसकी सबसे पहली और सबसे बड़ी अपूर्वता तो यह है कि लोकतांत्रिक संदर्भ में, प्रचलित निर्वाचन-पद्धति से स्थापित यह सर्वप्रथम कम्युनिस्ट-सरकार है। उसकी दूसरी अपूर्वता यह है कि केन्द्रीय सरकार जिस पक्ष की है, उस पक्ष से भिन्न पक्ष की ही नहीं, बल्कि अपने आपको प्रमुख विरोधी मानने वाले पक्ष की वह सरकार है। यह इस बात का द्योतक है कि भविष्य में आमूलाग्र समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया में भी मूलगामी परिवर्तन होना संभवनीय ही नहीं, वरन् आवश्यक भी है। समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया में संदर्भ के अनुरूप परिवर्तन करने की वृत्ति वस्तुवादी, प्रयोगनिष्ठ और आनुभविक मानी जाती है। आज की अन्तर्राष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय परिस्थिति सशस्त्र क्रान्ति के लिए सर्वथा प्रतिकूल है। आज तो क्रान्ति का शान्ति एक प्रमुख आयाम (Dimension) हो गया है। केरल की कम्युनिस्ट-सरकार की ओर सारी दुनिया इसलिए बड़ी कुतूहल की दृष्टि से देखेगी। जैसा कि उस दिन त्रिवेंद्रम् में ब्रिटिश राजनीतिज्ञ वकील श्री डी. एन्. प्रिट ने कहा, "दुनिया का बहुत बड़ा हिस्सा बड़ी दिलचस्पी से इस प्रयोग की तरफ देखेगा। यदि यह प्रयोग सफल हुआ, तो उसका असर हर तरफ होगा।"

श्री प्रिट इसे "शान्तिमय क्रान्ति" मानने को तैयार नहीं हैं। वे उसे एक "उल्लेखनीय शान्तिपूर्ण परिवर्तन" कहते हैं। चाहे 'क्रान्ति' कहें या "उल्लेखनीय परिवर्तन" कहें, इतना स्पष्ट है कि केरल की घटना समाज-क्रान्ति की प्रक्रिया में परिवर्तन की द्योतक है। अब तक ऐसा समझा जाता था कि पार्लियामेंटरी पद्धति क्रान्तिकारी परिवर्तन के लिए उपयोगी नहीं है। पार्लियामेंटरी संस्थाएँ समाज के निहित स्वार्थों के औजार हैं, इसलिए क्रान्तिकारियों को उन पर कब्जा करके उनको तोड़ देना चाहिए। परन्तु अब भारत का कम्युनिस्ट पक्ष कहता है कि केरल की सरकार संविधान की मर्यादा में रह कर काम करेगी। भारत की काँग्रेसी केंद्रीय सरकार ने भी अपनी प्रतिसहयोग की नीति घोषित की है।

ई० स्टेपॅनोवा की लिखी हुई कार्ल मार्क्स की एक छोटी-सी जीवनी मॉस्को के 'फॉरेन लॅग्वेजेस पब्लिशिंग हाऊस' ने १९५६ में प्रकाशित की है। उसके अन्तिम करण में लिखा है : "संसार की रंगभूमि पर समाजवाद के अनुकूल कुछ मूलगामी परिवर्तन हुए हैं।...समाजवाद अब केवल किसी देश की चौखट तक सीमित नहीं रहा, वह एक जागतिक पद्धति के रूप में प्रकट हुआ है और अब उसने संसार के चौथाई भूखण्ड पर तथा उसकी पैंतीस प्रतिशत लोकसंख्या पर दखल कर लिया है। अतएव समाजवादी परिवर्तन के लिए परिस्थिति अनुकूल हो गयी है। आज ऐसी स्थिति है कि...पूंजीवादी लोकतंत्र के ये औज़ार (पार्लियामेंट) वास्तविक लोकेच्छा के उपकरणों में बदले जा सकते हैं।"

अधिकार-सूत्र ग्रहण करते हुए विधिवत् शपथविधि संपन्न करने के बाद केरल के नये मुख्य मंत्री श्री शंकरन् नंबुद्रीपाद ने आश्वासन दिया कि "केरल की नयी सरकार सभी पक्षों के प्रतिनिधियों की और राज्य के विशेषज्ञों की एक परिषद करायेगी और द्वितीय पंचवार्षिक योजना की कालावधि के लिए केरल के विकास की एक सर्वसंमत योजना बनायेगी।" केरल प्रान्तीय कम्युनिस्ट पक्ष के 'करारे आदमी' श्री अच्युत मेनन ने कहा, "कम्युनिस्ट-मंत्रिमंडल प्रशासन संबंधी सारे मुख्य प्रश्नों का विचार अपने पक्ष से ऊपर उठ कर करेगा।" केरल के सामने जो अनेक समस्याएँ उनका हल खोजने में कम्युनिस्ट-सरकार विधान-सभा के भीतर के और बाहर के सभी पक्षों की सलाह लेगी।"

सभी पक्षों की सलाह तथा सर्वसाधारण जनता का सहयोग प्राप्त करने की नीति कम्युनिस्ट पार्टी की व्यवहार-नीति में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है।

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के सातवें अधिवेशन के ग्यारह वर्ष बाद जो आठवाँ अधिवेशन १५ सितंबर १९५६ को हुआ, उसका उद्घाटन करते हुए अध्यक्ष माओत्से-तुंग ने जो भाषण किया, उसका स्मरण हुए बिना नहीं रहता। अध्यक्ष माओ ने कहा, "जब तक जनता का सहयोग प्राप्त करने में और कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों के सिवा दूसरे लोगों से सहयोग करने में हम निष्णात नहीं होंगे, तब तक काम अच्छी तरह से होना असंभव है।"

अध्यक्ष माओ ने आगे चल कर कहा, "हम और सभी समाजवादी राष्ट्र शान्ति चाहते हैं। दुनिया के सभी राष्ट्रों की जनता शान्ति चाहती है।"

शान्ति की आकांक्षा आज शान्ति की आवश्यकता में परिणत हो गयी है और जागतिक परिस्थिति की अनुकूलता के कारण वह आवश्यकता व्यवहार्य हो गयी है। शान्ति की इस नीति को देश की समस्याएँ हल करने में केरल की कम्युनिस्ट-सरकार जिस हद तक कार्यान्वित करने का प्रामाणिक प्रयत्न करेगी, उस हद तक वह जनता का विश्वास प्राप्त कर सकेगी।

"अब शस्त्र-प्रयोग या हिंसक नीति आवश्यक नहीं रह गयी है," इतनी नकारात्मक नीति से काम नहीं होगा। भावरूप शान्ति-निष्ठा इस मुहूर्त की अनिवार्य आवश्यकता है। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के विषय में माओ ने श्लाघ्य प्रांजलता के साथ कहा, "आज भी हममें कई गंभीर त्रुटियाँ हैं। हमारे कई साथियों के दृष्टिकोण और क्रिया-शैली आज भी मार्क्स-लेनिनवाद के प्रतिकूल है। अर्थात् उनकी विचार-पद्धति में शुष्क सिद्धान्तवाद है, कार्य-प्रणाली में अफ़सरशाही है और संगठनात्मक मामलों में सांप्रदायिकता है।"

संसार में अप्रत्याशित वेग से जो अनपेक्षित परिवर्तन हो रहा है, उसकी दृष्टि से अब कम्युनिस्ट पार्टी और कम्युनिस्ट व्यक्तियों को भावरूप, विधायक शान्तिनिष्ठा को अपनी राष्ट्रीयता का अन्तर्राष्ट्रीय नीति का आधार बनाना होगा। दूसरा कोई उपाय नहीं है।

व्यवहारवादी नीतिनिपुणों का एक प्रसिद्ध सूत्र है—"अक्वेचेन्मधु विन्देत किमर्थं पर्वतं व्रजेत्।"—"यदि बगल के अकौए के पेड़ पर ही शहद मिल जाय, तो पहाड़ पर जाने की क्या जरूरत ?" फॅसिज़्म और 'कम्युनिज़्म' में हमने यह मूलभूत अंतर माना है कि 'फॅसिज़्म' युद्ध-संस्था तथा शस्त्रविद्या को मानवीय तथा सामाजिक विकास का एक अनिवार्य अंग मानता है—जहाँ 'कम्युनिज़्म' का लक्ष्य निःशस्त्रीकरण तथा युद्ध-संस्था का अन्त करना है। यदि केरल के प्रयोग से इतना भी सिद्ध हुआ कि वैधानिक मार्ग से लोकसहयोग के द्वारा आमूल समाज-परिवर्तन अव्यवहार्य नहीं है, तो भी संसार के इतिहास में एक नये पर्व का आरंभ होगा। इसका सक्रिय उपक्रम करने का सुयोग भारत को कम्युनिस्ट पार्टी को केरल में मिला है। हम उनका सुयश चाहते हैं।

वेतूळ, ७-४-'५७ —दादा धर्माधिकारी

प्रकाशन-समाचार

Planning and Sarvodaya J. B. Kripalani, Pages 68, Price-/8/-

सितम्बर, १९५६ में द्वितीय पंचवर्षीय योजना पर कृपालानीजी ने लोक-सभा में जो भाषण दिया, वही विस्तारपूर्वक इस पुस्तक में संगृहीत है। इस पुस्तक के पढ़ने से पाठकों को सर्वोदय की दृष्टि से द्वितीय पंचवर्षीय योजना की महत्त्वपूर्ण खामियों की झलक मिल जाती है। —सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी

विनोबाजी की पदयात्रा का कार्यक्रम

तिन्नेवेल्ली जिला : ता. १२ वल्लीयूर, १३ अंबालवणपुरम्; **कन्याकुमारी जिला :** ता. १४-१५ कन्याकुमारी, १६ नगरकोइल, १७ मुलकुमूडु। ता. १८ को केरल राज्य के पराचलई में प्रवेश करेंगे।

पत्रव्यवहार का पता : C/o भूदान-पदयात्रा स्वागत-समिति, १८२-ए. हाई रोड, तिन्नेवेल्ली. P. O. TINNEVELLY (S. India).

विषय-सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
१.	भूदान : आत्मा की व्यापकता का पहला पाठ	विनोबा	१
२.	ब्रह्मनिष्ठ रमण महर्षि	,,	२
३.	भगवान् महावीर : एक सामाजिक पुरुष !	साधक	३
४.	वाणी-विवेक	,,	३
५.	विज्ञान, आत्मज्ञान और सर्वोदय	विनोबा	४
६.	हमारा ध्यान मंत्र	काका कालेलकर	५
७.	ऐसे हैं हमारे वनवासी बालक !	अनसूया बजाज	५
८.	तमिलनाड में अहिंसात्मक शांतिमय क्रांति !	विनोबा	६
९.	सर्वोदय की दृष्टि :		
	१. वृद्ध दंपती अणु-परीक्षण-क्षेत्र में यात्रा करेंगे	दादा धर्माधिकारी	६
१०.	अलका नगरी में मानवीय मूल्यों का प्रतिष्ठान	जमनालाल जैन	७
११.	लोकतंत्र का वास्तविक अर्थ	नेमिशरण मित्तल	७
१२.	'नारायण' का सादा शब्द : 'सर्वोदय'	विनोबा	८
१३.	सत्य + प्रेम = भू-क्रांति	त्रिलोकचंद्र	८
१४.	विचार-क्रांति द्वारा स्वामित्व की समाप्ति	बद्रीप्रसाद स्वामी	८
१५.	नागोर जिले की भूदान-पदयात्रा	,,	९
१६.	नैतिक आन्दोलन के साधन	—	९
१७.	भूदान-आन्दोलन के बढ़ते चरण	—	१०
१८.	१८ अप्रैल को भू-क्रांति-दिवस मनायें : अपील	—	१०
१९.	बिहार में भूक्रांति अभियान की प्रगति	—	११
२०.	केरल की अपूर्व घटना का इंगित	दादा धर्माधिकारी	१२

सिद्धराज ढड्ढा सहमंत्री, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, काशी

www.vinoba.in